खण्ड

2

स्त्रियों के कार्य के संदर्भ में इतिहास-लेखन संबंधी मुद्दे एवं विमर्श

इकाई 1
अंतर्राष्ट्रीय विमर्श 75

इकाई 2
भारतीय विमर्श-I 89

इकाई 3
भारतीय विमर्श-II 110

इकाई 4
लामबंदी और प्रतिरोध 124

इकाई 1 अंतर्राष्ट्रीय विमर्श

संरचना युथिका मिश्रा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 महिलाओं की आर्थिक गतिविधिः सीमाएँ एवं सामर्थ्य

1.4 पारिवारिक जीवन और कार्य के बीच संबंध - 'संतुलनकारी कृत्य'

1.5 गरीबी का स्त्रीकरण

1.6 शिक्षित समाज में महिलाएँ

1.7 स्त्रियों के कार्य और सामाजिक संरक्षण

1.8 सारांश

1.9 संदर्भ

1.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

ऐतिहासिक रूप से, पूर्वी और पश्चिमी दोनों समाजों में महिलाओं को कमजोर लिंग के रूप में देखा जाता रहा है और इसी दृष्टिकोण के चलते महिलाओं को मनुष्य रूप में कमतर आंका गया। आज भी दुनिया के अधिकांश देशों में महिलाएँ, पुरुषों की अपेक्षा कम सुपोषित, कम स्वस्थ और शारीरिक हिंसा तथा यौन शोषण के प्रति अधिक सुभेद्य हैं साथ ही नौकरियों में उन्हें पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाता है। इसी तरह पुरुषों की तुलना में स्त्रियों में साक्षरता की संभावना कम है और उनके लिए पूर्व-व्यावसायिक या तकनीकी शिक्षा की संभावनायें आज भी काफी कम हैं। यदि स्त्रियां ऐसे कार्यस्थलों और राजनीतिक जीवन में प्रवेश करने का प्रयास भी करती हैं तो उन्हें नियोजन में भेदभाव और यौन उत्पीड़न के साथ साथ परिवार के सदस्यों की ओर से अपेक्षाकृत अधिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। तमाम देशों में कानून की नज़र में भी महिलाएँ पुरुषों के पूर्णतया समान नहीं हैं। अधिकांशतया घरेलू कार्यों और बच्चों की देखभाल की पूरी जिम्मेदारी के बोझ से दबी स्त्रियों को मनोरंजन और कल्पनात्मक उड़ानों के लिए अवसर कम मिलता है। यह सभी असमान सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ महिलाओं को कमतर मानवीय क्षमताओं से लैस करती हैं। हालाँकि, लगभग सभी व्यवसायों में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन आ रहा है।

आइए, इस इकाई के उद्देश्यों पर एक नज़र डालते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ चुकने के बाद, आप इस योग्य हो चुके होंगे कि :

- यह विश्लेषण कर सकें कि महिलाओं को कमजोर लिंग क्यों माना जाता है और समाज में पुरुषों की तुलना में उनके अधिकार अपेक्षाकृत कम क्यों हैं;
- उन कारणों का परीक्षण कर सकें कि क्यों कार्यस्थल पर महिलाओं को भेदभाव का सामना करना पड़ता है और समान कार्य के लिए कमतर वेतन प्राप्त करती हैं;

- पूर्व-औद्योगिक काल, औद्योगिक काल और आधुनिक काल के दौरान महिलाओं के रूबरू उनकी कार्य भागीदारी को अवस्थित कर सकें,
- उन तरीकों की जांच कर सकेंगे जिससे स्त्रियों के कार्य के प्रति सांस्कृतिक समझ में परिवर्तन आता गया; और
- महिलाओं के कार्य और उनकी आनुषंगिक स्थिति के प्रति विभिन्न संगठनों, समूहों और विद्वतजनों की चर्चाओं की समीक्षा कर सकें।

1.3 महिलाओं की आर्थिक गतिविधिः सीमाएँ एवं सामर्थ्य

अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय निकायों की पहल से महिलाओं के सवेतन कार्य के रूबरू स्थिति में परिवर्तन हो रहा है और परिणामस्वरूप समग्र रूप में महिलाओं की समझ में बदलाव आया है। आज समाज में महिला पेशेवर उद्योगपतियों, उद्यमियों, मंत्रियों और न्यायाधीशों की अच्छी खासी प्रतिशतता है। दुनिया भर में विश्वविद्यालयों में महिला स्नातकों का अनुपात बढ़ रहा है। महिलाओं की आर्थिक उन्नति को प्रायः समाज की समग्र उन्नति के लिए एक संकेतक के रूप में उपयोग किया जाने लगा है।

महिलाओं का श्रमशक्ति के रूप में लगने का एक अर्थ पुरुषों पर कम निर्भरता भी है। साथ ही श्रम शक्ति में महिलाओं की भागीदारी ने सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विमर्श के बौद्धिक क्षेत्र का विस्तार किया है। कहने की बात नहीं है कि प्रशासनिक पदों पर महिलाओं की नियुक्ति ने उन मिथकों को तोड़ दिया है कि राजनीति और नेतृत्व जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के पदों पर विशुद्ध रूप से पुरुषों का एकाधिकार है। लेकिन, क्या हाल की घटनाओं से महिलाओं की आर्थिक स्थिति में अंतर्निहित सुधार के संकेत मिलते हैं? क्या वास्तव में महिलाएँ पुरुषों के मुकाबले अपनी जीवन स्थितियों में सुधार कर पा रही हैं? विशिष्ट रूप से क्या महिलाएँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो रही हैं, अधिक नौकरियां पा रही हैं और बेहतर वेतन पा रहीं हैं?

जेंडर का अर्थशास्त्र

यदि हमें महिलाओं की समस्या और आर्थिक विकास पर सफलतापूर्वक काम करना है, जिससे कि महिलाओं को रोजगार बाजार में उनका स्थान पाने के लिए तैयार किया जाए तो कई ऐसी संरचनाएं और प्रतिमान हैं जिसका हमें सामना करना पड़ेगा जैसे कि वेतन में समता, 'अदृश्य रुकावटें', कार्य और परिवार में संतुलन, घरेलू कार्य और 'वास्तविक कार्य', गरीबी का स्त्रीकरण और विद्वत समाज में महिलाएँ।

इसके साथ ही जेंडर और आर्थिक गतिविधि के सन्दर्भ में रोजगार और बेरोजगारी के अर्थ को भी समझना होगा। महिलाओं के कार्य को नए सिरे से जेंडरीकृत दृष्टिकोण से परिभाषित करना पड़ेगा जिसे घरेलू कार्य या पारिवारिक कार्य कहा जाता है, उसे वैश्विक पहलों की नई रोशनी में देखना होगा जिससे महिलाओं के कार्य को सीधे-सीधे घरेलू और बाहरी कार्य के रूप में अभिलेखित किया जा सके। जिसे पहले एक गैर आर्थिक गतिविधि के रूप में देखा जाता था उसे आज बदली स्थितियों में देखा जा रहा है जो भविष्य में संभावना है कि महिलाओं की आर्थिक भूमिका को फिर से पुनर्परिभाषित किया जाए।

महिलाओं की आर्थिक स्थिति

महिलाओं के आर्थिक कल्याण को अक्सर किसी समाज की समग्र उन्नति के संकेतक के रूप में देखा जाता है। ऐसा माना जाता है और आम चर्चा का विषय है कि जिस समाज

में पुरुषों की तुलना में महिलाओं को बेहतर वेतन मिलता है, वह समाज अपने समस्त जनों के लिए लाभ और समान अवसर उपलब्ध करवाने में उतना ही तत्पर होता है। बल्कि बिल्कुल हाल के दिनों में, महिला समूहों के गठन में वृद्धि और प्रमुख सरकारी पदों पर महिलाओं की नियुक्ति में बढ़ोत्तरी की परिघटनाएं देख चुके हैं। महिलाएँ बहुत तेज़ी से राजनीति और विकास को प्रभावित कर रही हैं। क्या महिलाएँ वास्तव में जीवन स्थितियों में पुरुषों के बराबर सुधार कर पा रही हैं? विशेष रूप से, क्या महिलाएँ अधिक शिक्षित हो रही हैं, अधिक नौकरियां पा रही हैं और क्या उन्हें बेहतर वेतन मिल रहा है?

सामान्य ऐतिहासिक गतिविधियों और महिलाओं के कमाऊ सामर्थ्य, व्यवसायों में उनकी प्रगति और 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के विचार पर आधारित मजदूरी की समानता हेतु चलाए गए आधुनिक आन्दोलनों और आर्थिक लिहाज से जेंडर आधारित विचारों को पीछे छोड़ देने जैसी बातों पर थोड़ी चर्चा कर लेना व्यावहारिक होगा। विभिन्न समाजों में विभिन्न स्तरों तक सफलता प्राप्त करने हेतु नीतियों, कार्यक्रमों, तरीकों और साधनों पर चर्चा वैश्वीकरण के संदर्भ के अन्तर्गत की जाएगी। अफ्रीका, यूरोप, नई दुनिया और एशिया के उन तमाम देशों, जिन्होंने बाजार में लैंगिक समानता हासिर कर ली है या हासिल करने के बहुत करीब हैं, के द्वारा निर्धारित मानकों को उन देशों के लिए लक्ष्य की तरह चिन्हांकित किया जाएगा जो अभी तक ऐसा नहीं कर पाए हैं।

महिलाओं के कार्य पर विभिन्न दृष्टिकोण

'वास्तविक कार्य','घरेलू कार्य' और परिवार के बारे में परस्पर विरोधी धारणाएं हैं क्योंकि ज्यादातर कामकाजी महिलाएँ अभी भी अपने परिवारों हेतु प्रतिबद्ध हैं। वास्तव में महिलाओं के घरेलू कार्य सामाजिक रूप से उत्पादन की श्रेणी में आते हैं क्योंकि क्योंकि श्रम शक्ति के उत्पादन और उसके पोषण में इसका महती योगदान है। एक अन्य महत्वपूर्ण अवधारणा जो बिल्कुल हाल में सामने आया है, वह है अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा सुझाया गया **'शिष्ट कार्य'** का कार्यवृत्त।

1.4 पारिवारिक जीवन और कार्य के बीच संबंध-'संतुलनकारी कृत्य'

कार्य और पारिवारिक जीवन के बीच परस्पर-व्याप्त संबंधों को समझने की महती आवश्यकता है। यह संबंध खासतौर पर अकुशल महिला कर्मियों में व्यापक है। किसी भी औद्योगिक समाज की यह एक लाक्षणिक विशिष्टता है।

इस बारे में चर्चा कि औद्योगीकरण के चलते महिलाओं के जीवन में सुधार हुआ है या गिरावट आयी है, दरअसल महिलाओं के आर्थिक अवसरों की सवाल से जुड़ी हुई है। औद्योगिक समाजों में घर से बाहर जाकर कार्य करने को अधिक महत्व दिया गया है। इसी के परिणामस्वरूप बाहरी कार्य एक तरह से आत्मसम्मान का प्रतीक बन गया है। इसी से यह समझने में मदद मिलती है कि क्यों महिलाएँ उस कार्य के लिए तैयार हुई हैं जिसे **केट क्रेहन** 'संतुलनकारी कृत्य' **(Balancing set)** कहती हैं जिससे कि वे अपने लिए आत्मसम्मान को सुनिश्चित कर सकें।

हालाँकि, काम और घर के बाहर काम करने की प्रतिबद्धता से जुड़ी ये धारणाएं विभिन्न देशों में अलग-अलग हैं। सिल्विया वौल्बी, जेंडर आधारित रोजगार में परिवर्तन और समाज तथा राजनीतिक अर्थव्यवस्था की व्यापक प्रणालियों के लिए इसके अंतर्संबंधों पर प्रकाश डालती हैं। जेंडर वैश्वीकरण और कार्य रूपांतरण पर उनका अध्ययन (जीएलओडब्लू) काम करने

के गैर-मानक रूप विनियमन, ज्ञान अर्थव्यवस्था की प्रकृति, और पूँजीवाद तथा जेंडर व्यवस्था की किस्मों के सैद्धांतीकरण में परिवर्तनों को समझने में विशेष रूप से उपयोगी है।

वेतन समानता

अमेरिकी श्रम सांख्यिकीय ब्यूरो के अनुसार, विकासशील देशों में खाद्य पदार्थों के कुल उत्पादन का 80 प्रतिशत तक हिस्सा महिलाएँ उत्पादित करती हैं लेकिन कभी कभार ही उस भूमि पर उनका अधिकार होता है जिन पर वे खेती करती हैं। पूरी दुनिया में कुल श्रम शक्ति की एक तिहाई महिलाएँ हैं। हालाँकि दूसरी अन्य गतिविधियों के साथ-साथ उनका अधिकांश काम भी अवैतनिक रह जाता है। अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में भी महिलाओं का ही वर्चस्व है, परन्तु आमतौर पर उनका यह काम आर्थिक आंकड़ों में परिलक्षित नहीं हो पाता। यदि सकल घरेलू उत्पाद की वैश्विक गणना में घरेलू काम शामिल कर लिए जाएँ तो इसकी कुल राशि में 25 प्रतिशत की वृद्धि होगी जो आमतौर पर पुरुषों की तुलना में अधिक होगी। यह भी स्पष्ट है कि पुरुषों की तुलना में महिलाएँ अधिक घण्टे काम करती हैं। विकासशील देशों में, महिलाओं के काम के घंटे पुरुषों की अपेक्षा 30 प्रतिशत अधिक हैं लेकिन हर पेशे में महिला पूर्णकालिक कर्मचारियों की तुलना में पुरुष पूर्णकालिक कर्मचारी अधिक वेतन प्राप्त करते हैं। आखिर इस वेतन अंतराल से पार पाना इतना कठिन क्यों है? इसके पीछे एक कारण तो पितृसत्तात्मक समाज की महिलाओं और उनके द्वारा किए गए काम के प्रति सोच है जो उसे कम महत्वपूर्ण मानती है। इसके अतिरिक्त एक तथ्य यह भी है कि अंशकालिक कामगारों में 90 प्रतिशत तक महिलाएँ हैं। इसका अल्पकालिक लाभ यह है कि इससे ऐसी नौकरियों की संख्या में वृद्धि होती है जिसे घरेलू जिम्मेदारियों के साथ किया जा सकता है, जबकि दीर्घकालिक हानि अधिक है जिसमें कमतर जॉब सिक्योरिटी, नौकरी के अवसरों को बनाए रखने की कम क्षमता और कार्यस्थल के लाभों जैसे पेंशन और स्वास्थ्य बीमा आदि के न होने जैसे नुकसान शामिल हैं।

पुरुषों की बेरोजगारी और अल्प रोजगार की समस्या ने महिलाओं पर और भी दबाव डाला है कि वे परिवार हेतु जीविका कमाने वाले सदस्य की भूमिका निभायें। परिवार को अकेले अपने दम पर पालने में पुरुष तेज़ी से असमर्थ होते जा रहे हैं। कनाडा, फ्रांस, स्वीडन, संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, नीदरलैंड और स्पेन आदि में कामकाजी उम्र के युवा बेरोजगार पुरुषों की प्रतिशतता में वृद्धि हुई है। कामकाजी माएँ, जो बच्चे की देखभाल और दूसरी प्राथमिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए, घर से बाहर काम करने में सामंजस्य बिठा रही हैं, उनके कंधों पर भारी बोझ बढ़ता जा रहा है, खास कर उस समय जब उनका परिवार बढ़ता है। इस परिघटना में दूसरे अन्य कई कारक भी अपना योगदान देते हैं जिनमें प्रवासन के बढ़ता स्तर और वैवाहिक विघटन के उच्च स्तर के साथ साथ एकल मां को जन्मे बच्चों की संख्या में वृद्धि भी शामिल हैं। पुरुषों द्वारा ड्रग्स और शराब का अत्यधिक सेवन, कई संगठनों और संघों में सहभागिता तथा बहु-विवाह जैसी प्रथाओं से महिलाओं को और अधिक आर्थिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है, क्योंकि पुरुषों के पास उन कई परिवारों का खर्च चलाने के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं हैं। फिलीपींस के साक्ष्य से पता चलता है कि एक अतिरिक्त बच्चा अपनी माँ के काम के बोझ में प्रति सप्ताह औसतन 8.4 घण्टे की वृद्धि कर देता है।

चूंकि महिलाओं द्वारा अपनी कमाई का खर्च अपने परिवार की बुनियादी जरूरतों पर करने की संभावना अधिक होती है, इसलिए उनकी आय परिवार पर अधिक सकारात्मक प्रभाव डालती है। दक्षिण भारत में हुए एक अध्ययन में पाया गया कि महिलाएँ मुश्किल से अपनी कमाई का कोई हिस्सा अनन्य रूप से अपने व्यक्तिगत उपयोग के लिए रखती हैं जबकि पुरुष औसतन 26 प्रतिशत हिस्सा अपने पर खर्च करते हैं। उनकी महत्वपूर्ण आर्थिक भूमिका के बावजूद आर्थिक क्षेत्र में निर्णय लेने की स्थिति में महिलाओं की संख्या बहुत ही कम है।

अधिकांश देशों में निजी क्षेत्र में सिर्फ 10 से 30 फीसदी तक महिला प्रबंधक बन पाती हैं और अत्यधिक उच्च पदों पर उनकी प्रतिशतता 5 प्रतिशत तक सीमित रह जाती है। ट्रेड यूनियन आंदोलन में भी महिलाओं का प्रतिनिधित्व काफी कम है।

ग्लास सीलिंग अर्थात अदृश्य सीमा

मौजूदा आर्थिक संरचनाएं पुरुषों के प्रभुत्व से ग्रसित हैं और महिलाओं की उन्नति में बड़ी बाधा उत्पन्न करती हैं जो उनकी शिक्षा और अनुभवों को नज़रअंदाज़ कर उन्हें पेशेवर रूप से आगे बढ़ने से रोकती हैं। दुखद यह है कि ऐसी संरचनाएं आज भी अभेद्य हैं। ये संरचनाएं महिलाओं की तुलना में पुरुषों की पारंपरिक अपेक्षाओं और धारणाओं पर आधारित नेटवर्क और उपलब्धियों को मानक के रूप में शामिल करती हैं। ऐसी स्थिति में ग्लास सीलिंग या अदृश्य सीमा नेतृत्व या निर्णायक पदों की आकांक्षा करने वाली महिलाओं द्वारा सामना करने वाली स्थिति के लिए उच्चतम सीमा है। ऐसी महिलाओं की संख्या का अनुपात तो आश्चर्यजनक रूप से काफी कम है जिन्होंने अपने दम पर नेतृत्व के उच्चतम पदों पर अपना स्थान बनाया है। यह भी पाया गया कि जो महिलाएँ इस स्तर तक किसी तरह पहुँच भी गईं, खासतौर पर बहुराष्ट्रीय निगमों (एमएनसी) में, तो उन्हें एक दूसरी ग्लास सीलिंग का सामना भी करना पड़ा। इन महिलाओं को पुरुषों के समान ही वेतन और बोनस मिलता है। परन्तु इन्हें कम लोगों को प्रबंधित करने का अवसर दिया जाता है, कम स्टॉक का विकल्प दिया जाता है और पुरुषों की तुलना में कम विदेशी दौरे पर भेजा गया। कहने का अर्थ है कि किसी संस्था में उसी पद पर रहने का यह कतई मतलब नहीं कि उस संस्था में उन्हें पुरुषों के समान पदस्थिति प्राप्त हो। स्पष्टतः उन्हें यह संदेश दिया गया कि वे अपनी कंपनी में जितना हो सकता था उतनी ऊंचाई तक पहुंच चुकी हैं जबकि वहीं पुरुषों के लिए आगे भी नए अवसर उपलब्ध रहते थे।

काम और परिवार में संतुलन

अध्ययनों से पता चलता है कि, दुनिया के अधिकांश हिस्सों में, पुरुषों की तुलना में महिलाएँ प्रति सप्ताह अधिक घंटे काम करती हैं। हालाँकि, महिलाओं द्वारा काम में खर्च किया गए समय का एक बड़ा हिस्सा अवैतनिक कार्यों के लिए समर्पित होता है जैसे कि घरेलू कार्य, बच्चों की देखभाल, भोजन बनाना, कपड़े साफ करना, घर साफ करना, इस्त्री करना, बागवानी करना और पानी लाना तथा जलावन लकड़ी लाना और अन्य घरेलू गतिविधियां जिनकी गणना अर्थशास्त्रियों द्वारा काम की गणना में नहीं की जाती। ज्यादातर देशों में, अवैतनिक काम करने में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं का दोगुना समय जाया होता है। उदाहरण के तौर पर जापान में यह दर पुरुषों से नौ गुणा अधिक है। यहां तक कि यदि महिलाएँ पूर्णकालिक रूप से सवेतन कार्यरत हैं, तब भी ज्यादातर घरों में महिलाएँ ही घरेलू काम भी करती हैं। पारिवारिक जीवन में महिलाएँ जबर्दस्त ढंग से काम का अधिकांश बोझ उठाती हैं यद्यपि कुछ देशों में यह अंतर उल्लेखनीय रूप में कम हुआ है।

महिलाओं द्वारा प्रति सप्ताह काम किए जाने वाली अवधि की बात करें तो बांग्लादेश में प्रति सप्ताह 53 घण्टे, भारत में 69 घंटे और नेपाल में 77 घंटे है जबकि इन्हीं देशों में पुरुषों द्वारा प्रति सप्ताह क्रमशः 46, 56 और 57 घण्टे तक काम किया जाता है। इन देशों में एक और उल्लेखनीय समानता है। वह यह कि बच्चे की देखभाल में पिता द्वारा निभाई गई भूमिका प्रतिदिन औसतन एक घंटे से भी कम है। चीनी पिता बच्चों की देखभाल में सबसे अधिक प्रति दिन 0.9 घंटे खर्च करते हैं। कई महिलाओं के लिए वास्तविकता यह है कि बच्चों के देखभाल की व्यवस्था बनाने और उसे बनाए रखने के लिए सहायता और सहारे में भारी कमी है और इसके लिए उन्हें लगातार संघर्ष करना पड़ता है। इसके अलावा, पुरुषों की तुलना में पहले से ही महिलाओं की कम आय का अधिकांश हिस्सा बच्चों की देखभाल हेतु

भुगतान करने में चला जाता है। और ऐसे दम्पत्तियों में भी जिनमें दोनों समान रूप से पेशेवर कॅरियर में होते हैं इन समस्याओं को सुलझाने की जिम्मेदारी भी असंगत रूप से महिलाओं पर पड़ती है।

आगे पढ़ने से पहले निम्नलिखित अभ्यास का प्रयास करें।

अपनी प्रगति की जांच कीजिए

1) ग्लास सीलिंग या अदृश्य सीमा से क्या आशय है?

2) जेंडर का अर्थशास्त्र से क्या तात्पर्य है?

3) कामकाजी पुरुषों और महिलाओं के बीच असमान वेतन के क्या कारण हैं?

आगे आने वाले अनुभाग में आप गरीबी के स्त्रीकरण के बारे में पढ़ेंगे।

1.5 गरीबी का स्त्रीकरण

1950-2010 की अवधि के दौरान विश्व की जनसंख्या तिगुनी होकर लगभग 7 बिलियन तक पहुँच गई है। विश्व में महिलाओं की तुलना में लगभग 57 मिलियन अधिक पुरुष हैं। कुछ अनुमानों के अनुसार, दुनिया भर के गरीबों की आबादी में से 70 प्रतिशत महिलाएँ हैं और प्रतिदिन 1 डॉलर या उससे कम कमाने वाले 1.5 बिलियन लोगों में से अधिकांश महिलाएँ हैं। इसके अलावा, गरीबी के दुश्चक्र में फंसी महिलाओं और पुरुषों के बीच अंतर पिछले दशकों में लगातार बढ़ता गया है। इस परिघटना को ही प्रायः **'गरीबी का स्त्रीकरण'** कहकर संदर्भित किया जाता है।

एक अवधारणा के रूप में 'गरीबी का स्त्रीकरण' पद 1970 के दशक में आया। फिर यह अधिकांशतया 1990 के दशक की शुरुआत में संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों द्वारा किये अनुसंधान के दौरान लोकप्रिय हुआ। इस अवधारणा के कई अर्थ हैं, जिनमें से कुछ परिवर्तन के अपने अंतर्निहित प्रतीक के साथ पूरी तरह से सुसंगत नहीं है। हाल के दौर में इस क्षेत्र में हुए अध्ययन दावा करते हैं कि गरीबी का स्त्रीकरण दरअसल महिलाओं या महिला-प्रधान परिवारों के विरुद्ध पक्षपाती ढंग से गरीबी के स्तर में बदलाव करता है। अधिक विशिष्ट रूप से कहा जाए तो यह महिलाओं और पुरुषों के बीच या फिर एक ओर ऐसे परिवारों जिनकी प्रधान महिलाएँ हैं और दूसरी ओर ऐसे परिवारों जिनके प्रधान पुरुष या दम्पत्ति हैं के बीच भी गरीबी के स्तरों में अंतर में वृद्धि को दर्शाता है। इस पद का प्रयोग ऐसे अर्थ में किया जा सकता है कि जेंडर असमानता के चलते गरीबी में वृद्धि होती है इसलिए इसे गरीबी के कारणों का स्त्रीकरण कहना अधिक उपयुक्त होगा।

गरीबी में रहने वाली महिलाओं को अक्सर अत्यन्त महत्वपूर्ण संसाधनों जैसे कृषि या उद्यम ऋण, भूमि पर मालिकाना हक और विरासत आदि से वंचित रखा जाता है। उनकी मेहनत के बदले न तो कोई पुरस्कार मिलता है और न कोई पहचान, उनकी स्वास्थ्य देखभाल और पोषण की आवश्यकताओं को भी प्राथमिकता नहीं दी जाती और शिक्षा तथा सहायता सेवाओं तक उनकी पर्याप्त पहुंच भी नहीं होती। गरीबी का यह लैंगिक विभाजन (gendered distribution) दिखाता है कि पुरुष नेतृत्व वाले घरों की तुलना में उन घरों में गरीबी अधिक है जिनकी प्रधान महिलाएँ कमाऊ हैं और इन सर्वाधिक गरीब घरों में भी पुरुषों की बजाय महिलाएँ गरीबी से अधिक ग्रस्त हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा की गई अध्ययन की रिपोर्टों (1995 से 2010 के बीच) का सुझाव है कि गरीबी के स्त्रीकरण को उन्मूलित करने हेतु तीन प्रासंगिक कारक हैं:

- मजबूत पारिवारिक संबंध,
- महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर, और
- सामाजिक कल्याण की एक मजबूत प्रणाली।

दुनिया भर में **'गरीबी के स्त्रीकरण'** की अवधारणा का परीक्षण उन तीन महत्वपूर्ण कारकों के संदर्भ में किया गया जिस पर संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की मानव विकास रिपोर्ट (यूनएनडीपी, 2004) में जोर दिया गया था:

- प्रथम कारक है महिला-प्रधान परिवारों की संख्या में वृद्धि,
- द्वितीय, घरों के अंदर ही महिलाओं और लड़कियों में असमानताएं और उनके प्रति पूर्वाग्रह, और
- तृतीय, नव उदारवादी आर्थिक नीतियां

बॉक्स सं. 1.1

एक तर्क दिया जाता है कि महिलाओं की वृद्धिकारी दर्शनीय गरीबी की जड़ें जनसांख्यिकीय रुझानों, सांस्कृतिक प्रतिमानों और राजनीतिक अर्थव्यवस्था में है। सामाजिक असमानता महिलाओं और लड़कियों की इस प्रवणता को ज्यादा बढ़ाती है और यह समस्या सामाजिक वर्ग और क्षेत्र के साथ बदलती रहती है। हालाँकि वंचित महिलाओं की स्थिति निर्विवाद है, गरीबी को उससे भी निम्नतर मानव अधिकारों से इंकार के रूप में देखा जाता है। यह भी देखा गया है कि गरीब महिलाएँ दोहरा कष्ट सहती हैं, पहला तो लैंगिक असमानता के कारण और दूसरा गरीबी की वजह से। इसलिए गरीबी का समूल नाश करने या उसे कम करने के प्रयासों में लैंगिक असमानता और महिलाओं के मानव अधिकारों पर ध्यान देने की जरूरत है।

आप गरीबी के स्त्रीकरण के बारे में अधिक विस्तार से खण्ड 6 में पढ़ेंगे। अब हम लोग शिक्षा के क्षेत्र में विशेषकर उच्चतर शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति की पड़ताल करते हैं।

1.6 शिक्षित समाज में महिलाएँ

वर्षों पहले, जो महिलाएँ उच्च शिक्षा पाने के लिए बहुत जोर देती थीं, उन्हें तमाम देशों में अनुचित माना जाता था। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अमेरिकी शिक्षक एडवर्ड क्लार्क ने यह तर्क दिया था कि महिलाओं का मस्तिष्क अपेक्षाकृत अविकसित और उच्च शिक्षा की बौद्धिक दृढ़ता के लिए अनुपयुक्त होता है और यदि महिलाएँ विचार करने में अपनी ऊर्जा का बहुत अधिक उपयोग करेंगी तो उनके जीवंत प्रजनन अंगों में ऊर्जा की कमी हो सकती है जो कालांतर में उन्हें बांझ तक बना सकती है। कई देशों में, स्नातकों में महिलाओं की संख्या 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत से अधिक नहीं है और दूसरे देशों में भी उनकी भागीदारी अभी भी काफी कम है। अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ़ यूनिवर्सिटी प्रोफेसर्स (एएयूपी) द्वारा जारी की गई एक रिपोर्ट दर्शाती है कि शैक्षणिक सत्र 2003-04 में डॉक्टरल संकाय में पुरुष सदस्य, महिलाओं की तुलना में एक या दो ही अधिक थे। इसकी तुलना में अपेक्षाकृत निचली रैंक में आने वाले सामुदायिक कॉलेजों के संकाय महिलाओं से ही भरे हुए थे। 2005-06 के शैक्षणिक सत्र के दौरान केवल 26 प्रतिशत महिलाएँ उच्च शिक्षा संस्थानों में महत्वपूर्ण पदों पर काबिज थीं जबकि बाकी महिलाएँ निचले स्तर के अधिगम संस्थाओं जैसे परास्नातक, स्नातक या सहयोगी संस्थानों में पदासीन थीं।

विभिन्न संस्थानों में महिला संकाय सदस्यों की संख्या में अंतर इसमें शामिल अध्ययन के विषय के कारण भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, विज्ञान और इंजीनियरिंग के क्षेत्र में डिग्री के लिए पुरुष अधिक जाते हैं और अधिकतर अनुसंधान विश्वविद्यालयों में इन्हीं क्षेत्रों से लोगों को नौकरी पर रखने की संभावना भी अधिक रहती है। इस प्रकार, सबसे बड़ी समस्या यह हो सकती है कि विश्वविद्यालयों में महिला छात्रों और महिला शिक्षकों की अधिकांश भीड़ ऐसे विषयों में है जो परंपरागत तौर पर स्त्रैण माने जाते रहे हैं। अब जबकि ऐसे कुछ संकेत हैं कि विज्ञान और गणित में कुछ हद तक जेंडर का अंतर कम हो रहा है, वहीं दूसरी ओर लगता है कि प्रौद्योगिकी और कंप्यूटर विज्ञान की पढाई में यह बढ़ता जा रहा है।

यहां पदों या रैंक का सवाल भी उठाया जा सकता है क्योंकि यह भी चर्चा का एक संकेतक है कि सामान्य व्यवस्थाओं में महिलाएँ कहां हैं। इसमें सामने आता है कि अधिकतर महिलाएँ निम्नतर पदों जैसे कि अनुदेशक, व्याख्याता और सहायक प्रोफेसर पर ज्यादा काबिज होती

हैं और वह भी पुरुष संकाय सदस्यों की अपेक्षा उच्चतर पदों तक कम ही पहुंच पाती हैं। **व्यवसायों की आर्थिक स्थिति पर आई वार्षिक रिपोर्ट** यह खुलासा करती है कि 2004 में पूर्णकालिक प्रोफेसरों में से 26 प्रतिशत महिलाएँ थी जबकि उनकी तुलना में 74 प्रतिशत पुरुष प्रोफेसर थे। 2009 के **उच्च शिक्षा के तिथिगत पंचांग** के अनुसार यह आंकड़ा 2007 तक अपरिवर्तित ही रहा। पाइपलाइन बहस का उपयोग विसंगतियों, रैंक और कार्यकाल की व्याख्या करने में किया गया है।

इस सिद्धांत के अनुसार महिलाएँ अभी इंतजार (पाइपलाइन) में है और अंततः अपने पुरुष समकक्षों की दर से आगे प्रगति करने लग जाएंगी। अकादमिक उपलब्धियों में समानता के बावजूद अकादमिक पदों पर भी महिलाओं की पदोन्नति पुरुषों के समान दर से नहीं होती और निचले अकादमिक स्तर पर महिलाओं के लिए अपघर्षण भी अधिक है, अर्थात उन्हें निम्न पदों पर लम्बे समय तक बनाए रखा जाता है। इसके अतिरिक्त महिलाओं को पूर्णकालिक प्रोफेसर के पद तक पहुंचने में अधिक समय लगता है। फिर ऐसे भी संकेत मिलते हैं कि दोनों की डिग्रियां और योग्यताएं समान रहने के बावजूद पुरुष और महिला प्रोफेसरों के वेतन में विसंगतियों की ओर इशारा करते हैं। एएयूपी के अनुसार पुरुषों और महिलाओं के बीच सभी पदों पर वेतन में अंतर 2.9 प्रतिशत से 12.1 प्रतिशत तक है।

एक दूसरा संबंधित मानदण्ड महिलाओं के और पुरुषों के वेतन का असमान होना है। 1975-76 की एएयूपी की वार्षिक रिपोर्ट में पूर्णकालिक शिक्षकों के वेतन का विवरण जेंडर के आधार पर प्रकाशित किया गया है। इस रिपोर्ट के अनुसार महिला संकाय सदस्यों का समग्र औसत वेतन पुरुषों के वेतन का 81 प्रतिशत था। 2009-10 की रिपोर्ट में भी यह अनुपात 81 प्रतिशत था, जिससे यह पता चलता है कि तीन दशकों से भी अधिक अवधि में अमेरिकी कॉलेजों और विश्वविद्यालयों के विभागों में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी के बावजूद महिलाओं के वेतन में कमी की ओर कोई सुधार नहीं हो सका। इससे आसानी से निष्कर्ष निकाला जा सकता है और साबित किया जा सकता है कि उच्च शिक्षा में अभी भी जेंडर असमानता जीवित है और अच्छी अवस्था में है।

शिष्ट या सभ्य कार्य

महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए स्वतंत्रता, समानता, सुरक्षा और मानवीय गरिमा के वातावरण में सम्मानजनक और उत्पादक काम प्राप्त करने के अवसरों को बढ़ावा देने की रणनीति के रूप में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) द्वारा एक अवधारणा **'सभी के लिए सभ्य काम'** सामने रखी गई है। शिष्ट या सभ्य काम की अवधारणा इसके चारों स्तम्भों- रोजगार और उद्यम विकास, काम के समय अधिकार, सामाजिक संरक्षण और संवाद के साथ एक महत्वपूर्ण संदर्भ का निर्माण करता है जिसका उद्देश्य विशेष तौर पर समाज के हाशिए पर धकेल दिए गए समूहों के सशक्तिकरण पर केन्द्रित रहते हुए समाजों को अधिक निष्पक्ष, संधारणीय और समतावादी बनाना है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने इसका नियोजन उस वैश्विक वित्तीय और आर्थिक संकट के चुनौतीपूर्ण पृष्ठभूमि में किया है जिसने पहले ही लाखों मजदूरों, पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से बेरोजगार कर दिया है।

शिष्ट कार्य वैश्वीकरण और धन के निष्पक्ष वितरण के लिए पहली आवश्यकता है, जो लम्बी अवधि में सभी को लाभान्वित करेगा। विकासशील देशों के कामगारों को औद्योगिक देशों के अधिक सुरक्षित परिस्थितियों में काम करने वाले और रहने वाले लोगों के समर्थन और एकजुटता की अतीव आवश्यकता है। **मारिया फ्लोरो और मिके मेयर्स** (2009) का तर्क है कि विशेष तौर पर महिलाओं को सामाजिक अधिकारों और संरक्षण की आवश्यकता है क्योंकि वेतन अर्जक के रूप में उनकी भूमिका बढ़ने के बावजूद वही सर्वाधिक कमजोर और

निर्बल लोगों में बनी हुई हैं। तमाम देशों में, शिक्षा, परिवार, राजनीति, संस्कृति और धर्म में व्यापक रूप से प्रचलित बहु स्तरीय भेदभावों के चलते सामान्य तौर पर श्रम बाजार तक महिलाओं की पहुंच और विशेष तौर पर शिष्ट कामों तक उनकी पहुंच अभी भी सीमित है। उन्हें अभी भी सम्मानजनक रोजगार, सामाजिक अधिकारों, सामाजिक संरक्षण और सामाजिक संवाद से बहुत कुछ हासिल करना है क्योंकि वे आज भी बच्चों की परवरिश और बुजुर्गों तथा बीमारों की तीमारदारी में लगी हुई हैं। सामान्य तौर पर पिछले दशकों में सभी क्षेत्रों में श्रमिकों के अधिकारों और काम में लैंगिक समानता के बारे में जागरूकता बढ़ी है फिर भी बहुत कुछ करने को बचा हुआ है।

व्यापार, पूँजी प्रवाह और आर्थिक पुनर्गठन में तीव्र विस्तार ने काम के स्वरूप में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं। उन्नत और विकसित बाजार अर्थव्यवस्थाओं से स्थानांतरित होकर नौकरियां विकासशील देशों की ओर और औपचारिक क्षेत्र से स्थानांतरित होकर अनौपचारिक क्षेत्र की ओर चली गई हैं। इन परिवर्तनों ने रोजगार के नए अवसर, विशेष रूप से महिलाओं के लिए पैदा किए लेकिन इसने अंतराल और असंतुलन भी पैदा किया तथा साथ ही दुनिया के तमाम हिस्सों में महिला कार्मिकों को हाशिए पर रखने की प्रक्रिया जारी रही।

महिलाओं की सभ्य या शिष्ट काम तक पहुंच, विशेष रूप से उनके बच्चों को जन्म देने और उत्पादन कार्यों में लगे होने के दोहरे बोझ से प्रभावित होता रहा है। इस बात ने और भी बोझ बढ़ाया है काम की परंपरागत अवधारणाओं में इसका हिसाब नहीं किया जाता। काम की परंपरागत अवधारणा में सिर्फ सवेतन कार्य पर ध्यान केन्द्रित रखा जाता है जबकि बच्चों के लालन पालन से जुड़े श्रम में हुए संबंधित परिवर्तनों की पड़ताल तक नहीं की जाती। प्रभावशाली सामाजिक सिद्धांतों ने महिलाओं के दोहरे बोझ की समस्या को प्रबलित ही किया है। समाज-जीवविज्ञान ने पुरुषों और महिलाओं के 'प्राकृतिक' अंतर पर बहुत जोर दिया है। मुख्यधारा के आर्थिक धारणाओं ने अवैतनिक काम, गैर-बाजार उत्पादन, सामाजिक मानदण्डों और आर्थिक एजेंट्स के बीच संबंधों की कीमत पर व्यक्तिगत तार्किकता, प्रतियोगिता और बाजारू गतिविधियों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया है। अभी बिल्कुल हाल की अवधि में नारीवादी अर्थशास्त्रियों ने अर्थशास्त्र को 'मानव जीवन के प्रावधान' के अध्ययन के रूप में पारिभाषित करते हुए नए और अधिक व्यापक सिद्धांतों का विकास किया है। विभिन्न देशों की आर्थिक विकास के वक्र, विशिष्ट सांस्कृतिक प्रथाएं और संस्थाओं के परिणामस्वरूप शिष्ट काम तक महिलाओं की पहुंच में उल्लेखनीय अंतर पैदा होता है। यह अंतर न केवल पुरुषों और महिलाओं के बीच, बल्कि शिक्षा, परिवार की संरचना, जाति, वर्ग और सामाजिक सुरक्षा और कल्याण प्रोत्साहन तंत्र तक पहुंच के कारण भी प्रकट होता है।

कार्यस्थलों पर शिष्ट काम की उपलब्धता और इस उपलब्धता की प्रवृत्ति विभिन्न देशों और क्षेत्रों में काफी अलग हैं। वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो 1996 से 2006 के बीच महिला श्रम बल की भागीदारी की दर पुरुषों के 80 प्रतिशत की तुलना में 53 प्रतिशत और लगभग स्थिर रही है। वैश्विक श्रम बाजार में पिछले दशक के शुरुआती वर्षों में लैंगिक अंतर में कुछ कम होता दिखा परन्तु 2007-08 के वैश्विक वित्तीय संकट के बाद इसमें फिर से वृद्धि हो गई। इस संकट ने महिलाओं में बेरोजगारी की दर को काफी बढ़ा दिया और महिलाओं की 13 मिलियन नौकरियों को खत्म कर दिया। इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में हालाँकि रोजगार-जनसंख्या अनुपात में लैंगिक अंतर 24.5 प्रतिशत के उच्च स्तर पर बना रहा परन्तु महिलाओं और पुरुषों दोनों की श्रम बल में भागीदारी दर समान रूप से कम हुई।

हालाँकि, क्षेत्रीय पृथक्करण के आंकड़ों से पता चलता है कि महिलाओं के लिए सभी क्षेत्रों में रोजगार के विकल्प अपेक्षाकृत बहुत अधिक सीमित हैं। महिलाओं को अभी भी कुछ निश्चित प्रकार के रोजगारों में विलगित रखा गया है। 2012 में, असुरक्षित रोजगार में

महिलाओं का हिस्सा; अर्थात परिवार में बगैर वेतन काम करने वाली महिलाओं और निजी तौर पर श्रमिक की तरह काम करने वाली महिलाओं जिनके पास काम करने की शिष्ट परिस्थितियां नहीं होतीं, पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा नहीं होती और श्रम संगठनों के माध्यम से अपनी बात रखने का अवसर नहीं होता; 50 प्रतिशत था जबकि वहीं ऐसे पुरुषों का हिस्सा 48 प्रतिशत। हालाँकि, उत्तरी अफ्रीका में उनके हिस्सेदारी में अंतर (24 प्रतिशत), मध्य पूर्व और उप-सहारा अफ्रीका (15 प्रतिशत) में यह अंतर बहुत गहरा था। विकासशील देशों में महिलाओं के खेतिहर मजदूरी से निकलने और विकसित देशों में औद्योगिक मजदूरी से निकलकर सेवा क्षेत्र में जाने के साथ कुछ समयावधि में यह क्षेत्रीय पृथक्करण में काफी वृद्धि हुई है।

इस प्रकार, उनमें से 85 प्रतिशत महिलाएँ शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सेवाओं में चली गईं हैं। इसी के साथ साथ यह भी देखा गया कि महिलाओं की नौकरियों के अंशकालिक या अस्थायी होने की संभावना अधिक रहती है। तमाम देशों में, महिलाएँ प्रमुखता से अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने लगी हैं और इस क्षेत्र में इस क्षेत्र में महिला कार्मिकों की हिस्सेदारी बढ़ती हुई प्रतीत होती है। 1980 के आरम्भ से 1990 के दशक के अंत तक, लैटिन अमेरिकी देशों और आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) के 20 देशों में और कई उत्तर-समाजवादी देशों में वेतन में दिखने वाले लैंगिक अंतर में उल्लेखनीय कमी आई और इन देशों में महिलाओं ने पुरुषों की तुलना में 80 प्रतिशत तक मजदूरी अर्जित की। लेकिन वेतन अंतराल में होने वाली यह कमी 2000 से 2010 के बीच लगभग सभी देशों में अवरुद्ध रही। यह भी देखा गया है कि वेतन या मजदूरी में अंतराल औपचारिक क्षेत्र की अपेक्षा प्रायः अनौपचारिक क्षेत्र में अधिक रहा है, और रोजगार के अनौपचारिक क्षेत्र की ओर स्थानांतरित होने से वेतन के लैंगिक अंतराल में होने वाली कमी का निवल लाभ महिलाओं के लिए सीमित ही है।

अब आप लोग एक छोटा सा अंतराल लीजिए और अब तक के अपने अधिगम की जांच के लिए कुछ सवालों के जवाब देते हुए निम्न अभ्यास कीजिए।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) शिष्ट या सभ्य काम से क्या आशय है?

2) गरीबी के स्त्रीकरण के क्या कारण हैं ?

3) गरीबी के स्त्रीकरण के उन्मूलन हेतु कौन से कारक प्रासंगिक हैं?

आगे आने वाले अनुभाग में आप महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता और महत्व के बारे में पढ़ेंगे।

1.7 स्त्रियों के कार्य और सामाजिक संरक्षण

नौकरियों के औपचारिक, कानून सम्मत और बड़ी कंपनियों से निकलकर छोटी और अनौपचारिक कंपनियों तथा घर से काम में स्थानांतरित हो जाने से काम अब अधिक असुरक्षित हो गए हैं। इन नौकरियों तक प्रायः महिलाओं की पहुंच अच्छी रहती है लेकिन ये नौकरियां श्रम कानूनों के संरक्षण से बाहर होती हैं और सामाजिक कल्याण के अधिकारों से भी हीन होती हैं। औपचारिक क्षेत्र में अंशकालिक श्रमिक भी महत्वपूर्ण असुरक्षाओं का सामना करते हैं।

सामाजिक संरक्षण, जिसमें सार्वजनिक स्वास्थ्य और शिक्षा पर खर्च शामिल हों और पेंशन तथा स्वास्थ्य बीमा तक पहुंच हो, विशेष रूप से महिलाओं को लाभ पहुंचा सकता है। 1980 के दशक के मध्य से लेकर 2004 तक के इन वर्षों में तमाम देशों ने इन संरक्षणों पर खर्च में गिरावट का अनुभव किया है। अपवाद स्वरूप कुछ थोड़े से मामलों में, राज्य ने अनौपचारिक या स्व-नियोजित श्रमिकों के कल्याण हेतु भी सामाजिक संरक्षण की योजनाओं का विस्तार करना शुरू कर दिया है। कुछ विकासशील देशों में एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक व्यवस्था, स्वयं श्रमिकों द्वारा, कुछ गैर सरकारी संगठनों (एनजीओ) की सहायता से, सामाजिक संरक्षण के वैकल्पिक स्वरूपों का विकास करना भी रहा है।

तमाम देशों में बढ़ते हुए 'लचीले' श्रम बाज़ारों ने श्रमिकों के अधिकारों और संगठित होने के उनके अधिकारों को कम किया है और उनकी सौदेबाजी की शक्ति को कम कर दिया है। श्रमिक संघों ने अक्सर इसकी प्रतिक्रिया में नए क्षेत्रों जैसे सेवा क्षेत्र और अनौपचारिक क्षेत्रों को संगठित किया है। कई देशों में संघों की महिला सदस्यता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है लेकिन इसने हमेशा महिला श्रमिकों की सौदेबाजी की शक्ति में वृद्धि नहीं की है। कुछ देशों में गैर-सरकारी संगठनों ने अनौपचारिक और गृह कार्य क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं को संगठित करना शुरू किया है।

बाज़ार अर्थव्यवस्था में महिलाओं के शिष्ट या सभ्य काम पाने की क्षमता परिवार स्तर पर उनकी लैंगिक भूमिकाओं और असंगत कार्य-विभाजन से जुड़ी है। घरों में महिलाओं को पुरुषों की तुलना में काफी अधिक अवैतनिक कार्य करना पड़ता है। जब सवेतन और अवैतनिक काम के घण्टों को जोड़ा जाता है तो पता चलता है कि महिलाएँ पुरुषों की तुलना में सप्ताह में अधिक घंटे काम करती हैं और उनके पास सोने या मनोरंजन तथा

अवकाश के लिए कम समय होता है। यह उस दर को प्रभावित करता है जिस दर से सवेतन कार्य का पारिश्रमिक तय किया जाता है। महिलाओं से बच्चों को जन्म देने और उनकी देखभाल करने की अपेक्षा भी महिलाओं के रोजगार और कार्यस्थल के चुनाव को प्रभावित कर सकता है।

अवैतनिक पारिवारिक जिम्मेदारियों हेतु सामाजिक सहायता तंत्र की कमी ने भी इन समस्याओं को गहरा किया है और गरीब तथा कमजोर परिवारों को सबसे अधिक मुश्किल में डाला है, जिससे वे रोजगार और देखभाल के बीच किसी एक का चुनाव करने या इन दोनों गतिविधियों में सामंजस्य बिठाने के लिए मजबूर होना पड़ता है। ऐसी स्थिति में कार्मिकों, विशेषकर महिला कार्मिक 'समय से हीन' और 'धन से हीन' बनकर रह जाती हैं, जो उनके तनाव को बढ़ाता है और उनकी सेहत को कमजोर करता है। कुछ देशों ने विस्तारित सवेतन अभिभावकीय छुट्टी की व्यवस्था करके, इस छुट्टी को साझा करने के लिए अधिक प्रोत्साहन देकर, अपेक्षित साप्ताहिक घंटों को सीमित करके और सार्वजनिक तथा वित्तीय सहायता प्राप्त बच्चों के देखभाल की सेवा का विस्तार करके सवेतन और अवैतनिक काम के बीच तनाव को काफी कम कर दिया है। हालाँकि लैंगिक समानता और सभी कामगारों के लिए शिष्ट या सभ्य काम कार्यवृत्त को सुनिश्चित करने के लिए बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

शिष्ट या सभ्य काम की उपलब्धता को बढ़ाने वाली आर्थिक और सामाजिक नीतियों को सफलतापूर्वक प्रोत्साहन देने के लिए कई मुद्दे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, उदाहरण के लिए, एक ओर तो जेंडरीकृत सांख्यिकीय तंत्र का विकास करना और शिष्ट या सभ्य काम पर जेंडर के भिन्न-भिन्न रूपों वाले आंकड़ों के मूल्यांकन हेतु ढांचे का निर्माण करना और दूसरी ओर सामाजिक नीतियों और सामाजिक संरक्षण तंत्रों के विकास और कार्यान्वयन में श्रमिक संघों और महिलाओं के संगठनों को भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करना।

कामकाजी महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा के बारे में और अधिक तथा विस्तार से आप खण्ड 5 और खण्ड 6 में पढेंगे।

1.8 सारांश

निःसंदेह, यह स्पष्ट है कि उच्च स्तर की बच्चों के देखभाल की व्यवस्था और कार्यस्थल में कुछ खास तरह का लचीलापन जिसकी आपूर्ति स्वयं में बहुत कम ही है, नौकरी और परिवार में संतुलन के तनाव को कम करके प्रतिफल को बढ़ाया जा सकता है। कार्यस्थल पर महिलाओं के एक अदृश्य परन्तु अपारगम्य रुकावट 'ग्लास सीलिंग' को उन्नत और प्रगतिशील आर्थिक नीति के माध्यम से अनिवार्य रूप से हटाया जाना चाहिए। अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका, परिवार के अस्तित्व और आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। महिलाओं पर अड़चनें डालने वाली मौजूदा आर्थिक नीतियों को बदलना चाहिए। ऋण, संपत्ति और बाजारों तक महिलाओं की पहुंच भी समान रूप से होनी चाहिए और इस पहुंच को सुरक्षित करने के लिए परिवार के पुरुष सदस्य की सहमति आवश्यक नहीं होनी चाहिए। ऐसे नीतिगत बदलाव भी अवश्य होने चाहिए जो परिवार में महिलाओं की भूमिकाओं हेतु अधिक मूल्य रखें जो यह सुनिश्चित भी करे कि पुरुष सदस्य भी अपने बच्चों और घरेलू कार्यों में समान जिम्मेदारी उठाए।

स्पष्ट रूप से, महिलाओं के लिए गरीबी के खतरे को कम करना उन्हें ऐसी स्थिति में लाना है जहाँ वे अच्छी आय अर्जित कर सकें। इसका तात्पर्य है उन महिलाओं के लिए सामाजिक और सांस्कृतिक सहारा प्रदान करना जो नौकरियों और पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच

संतुलन साधने की कोशिश कर रही हैं। और इसका अर्थ है महिलाओं को इस तरह से शिक्षित और तकनीकी रूप से प्रशिक्षित करना जो उन्हें उचित आय और प्रगतिशीलता के साथ रोजगार बाजार में प्रवेश करने की अनुमति दें। जरूरत है कि युवा महिलाओं अर्थात नई लड़कियों के लिए अपने को इंजीनियर, कंप्यूटर वैज्ञानिक, राजनीतिक नेता, व्यवसाय प्रबंधक, जैव प्रौद्योगिकीविद, विश्वविद्यालय के अध्यक्ष बनाने या फिर व्यापार क्षेत्रों में इलेक्ट्रीशियन, धातु शुद्धता और दूसरे उच्च कुशलता वाले और उच्च वेतन वाले कार्यों में अपने को नियोजित करने की कल्पना करने में मदद करने के तरीके खोजे जाएं। हमें यह समझना होगा कि यह न केवल महिलाओं के लिए बल्कि समग्र रूप से पूरे समाज के लिए आवश्यक है।

1.9 संदर्भ

Boserup, E. (1970). *Women's Role in Economic Development*, New York: St. Martin's Press.

Ellen, Jordan. (1989). *The Exclusion of Women from Industry in Nineteenth-Century Britain*. Comparative Studies in Society and History, 31 309-26.

Floro, Maria S. and Mieke Meurs (2009) Global Trends in Women's Access to "Decent Work", Dialogue on Globalisation, Occasional Papers, ILO, Geneva.

Pearce, D.M. (1978) The Feminization of Poverty: Women, Work and Welfare, *Urban and Social Change Review*, February 28-36.

Stange, Mary Zeiss and Carol K. Oyster, Jane Sloan (General Editors) (2011) Encyclopedia of Women in Today's World, Volume I, Sage Publications Inc., LA.

Epstein T. Scarlett, Kate Crehan, Annemarie Gerzer and Jurgen Sass (1986) (Eds) *Women, Work and Family in Britain and Germany.* The Anglo German Foundation for the Study of Industrial Society Croom Helm Ltd., Kent, Great Britain.

Knights, David, Deborah Kerfoot and Ida Sabelis (eds.)(2013) "Gender, Work and Organization.", Journal of Women's Studies published by John Wiley and Sons Ltd.

Ryan, John A. (1906). *A Living Wage*. Its Ethical and Economic Aspects. New York: Macmillan.

Rana, K. (1998). (Eds). *Modern Working Women and the Development Debate*. Kanishka Publishers, Distributors.

Report of International Labour Conference (ILO), 60th Session, (1975). Report VIII, Equality of Opportunity and Treatment for Women Workers.

Report of International Labour Conference (ILO), 96th Session (2007), Equality at Work: Tackling the Challenges.

Sylvia, W. (1986). *Patriarchy at Work*, Cambridge University Press.

1.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Rana, K. (1998). (Eds). *Modern Working Women and the Development Debate*. Kanishka Publishers, Distributors.

Sylvia, W. (1986). *Patriarchy at Work*, Cambridge University Press.

इकाई 2 भारतीय विमर्श-I

संरचना **नंदिता मंडल**

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 पृष्ठभूमि

2.4 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगार

2.4.1 संस्थागत असंगठित क्षेत्र

2.4.2 गैर-संस्थागत असंगठित क्षेत्र

2.5 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की समस्याएं

2.6 संगठित क्षेत्र में महिला कामगार

2.7 पंचवर्षीय योजनाएं (एफवाईपी): महिला कामगार

2.8 सारांश

2.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

2.10 संदर्भ

2.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

महिलाओं की आर्थिक गतिविधियों पर अंतर्राष्ट्रीय विमर्श के बारे में पढ़ने के बाद, इस इकाई में हम भारतीय विमर्श और उसके रूबरू लाभप्रद रोजगार में महिलाओं की भागीदारी और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उनके योगदान के बारे में केन्द्रित रहेंगे। यह इकाई आपके सामने उस घटना की परिस्थितियों और उन कारणों को उजागर करेगी, जिसने भारत सरकार को महिला श्रमिकों के हितों की ओर ध्यान केन्द्रित करने को अभिप्रेरित किया और यह भी कि भारतीय अर्थव्यवस्था में उनका योगदान अभी भी किस तरह से अदृश्य है।

इसके पश्चात इकाई में संस्थागत और गैर-संस्थागत दोनों प्रकार के अनौपचारिक क्षेत्रों में महिला कामगारों की स्थिति के बारे में चर्चा की जाएगी। और फिर संगठित क्षेत्र में जैसे कि सेवा विनिर्माण और प्रशासनिक सेवाओं में महिलाओं पर चर्चा की गई है। पंचवर्षीय योजनाओं में महिला कामगारों की स्थिति का विहंगावलोकन करते हुए यह इकाई समाप्त होगी।

आइए, अब इस इकाई के उद्देश्यों पर एक नज़र डालते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पूर्णतया पढ़ लेने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि :

- भारतीय अर्थव्यवस्था में 1970 से 1985 तक की अवधि में महिलाओं के योगदान की व्याख्या कर सकें; और

- भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान के महत्व और उसकी गहराई की समालोचकीय पड़ताल कर सकें।

2.3 पृष्ठभूमि

"आप किसी राष्ट्र की हालत वहां रहने वाली महिलाओं की स्थिति देखकर बता सकते हैं।"

-जवाहर लाल नेहरू

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री की उपरोक्त अभिव्यक्ति भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान के संदर्भ में आज भी प्रासंगिक है।

1971 में, अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की पूर्व संध्या पर, भारत सरकार ने फूलरेनु गुहा की अध्यक्षता में भारत में महिलाओं की स्थिति पर एक समिति की नियुक्ति की थी। इस समिति को भारतीय महिलाओं के अधिकारों और उनकी स्थिति का पड़ताल करने और उत्तर औपनिवेशिक भारत में राष्ट्र निर्माण हेतु महिलाओं को उचित भूमिका निभाने के लिए कुछ उपायों को सुझाने का अधिदेश दिया गया था। जब 1974 में इस समिति की रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो उसे भारत में महिलाओं की स्थिति पर 'ऐतिहासिक मानदण्ड' की तरह स्वीकार किया गया। रिपोर्ट में 1911 से 1971 तक काम में महिलाओं की गिरती सहभागिता को रेखांकित किया गया था। परिवार में महिलाओं के कार्यों और निर्वाह अर्थव्यवस्था को भारत की जनगणना द्वारा दर्ज नहीं किया गया था।

यहाँ इस इकाई के लिए, काम को बहुत ही परंपरागत तरीके से आर्थिक रूप से उत्पादक गतिविधि में भागीदारी के रूप में पारिभाषित किया गया है। ऐसी भागीदारी शारीरिक या मानसिक प्रकृति की हो सकती है। भारत में महिलाओं के काम की परिभाषा के मामलों में, जेंडर अर्थशास्त्रीय समालोचकों द्वारा गंभीर पड़ताल की आवश्यकता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन, जिसे जमीनी स्तर से आंकड़े एकत्र करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है, इन आंकड़ों के लिए विभिन्न दौर से गुजरता है और हर नए दौर के साथ आकड़ों को प्रामाणिक बनाने के लिए अधिक से अधिक बिंदुओं पर विवेचन करना पड़ता है। एनएसएसओ स्तर के विशेषज्ञ, आंकड़ा संग्रह की प्रक्रिया की प्रामाणिकता को सुनिश्चित करने के लिए, रास्ते की बाधाओं को हटाने के लिए बहुत कड़ी मेहनत करते हैं। एनएसएसओ द्वारा महिला श्रमिकों और गैर-श्रमिकों के लिए दी गई परिभाषा के गहन पड़ताल की आवश्यकता है। अब हम असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की स्थिति की समीक्षा करेंगे।

2.3 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगार

महिला कामगारों को दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- संगठित या औपचारिक क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएँ, और
- असंगठित या अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाली महिलाएँ।

यह वर्गीकरण संगठन की श्रेणी और उस क्षेत्र में रोजगार में समस्याओं की प्रकृति पर आधारित है। इन दोनों के बीच कार्यात्मक अंतर नहीं जैसे कृषि, उद्योग और सेवाओं के बीच होता है, क्योंकि ये कार्य दोनों क्षेत्रों में पाए जा सकते हैं। महिलाओं की स्थिति पर 1974 में बनी समिति के अनुसार इन दो श्रेणियों के बीच वास्तविक अंतर संगठन या उत्पादन संबंधों के चलते, सार्वजनिक नियंत्रण और विनियमन के पैठ की स्थिति के चलते है।

आंकड़ा संग्राहक एजेंसियों और वैज्ञानिक जांचकर्ताओं के अनुसार अनौपचारिक क्षेत्र में महिला कामगार, श्रमबल का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। श्रम शक्ति रिपोर्ट, 1988 के एक आंकलन के अनुसार, कुल महिला श्रमबलों में से 94 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में नियोजित

हैं। इनमें भी वे दुष्कर कार्य के हिस्सों में लगी हैं जैसे कि प्रति नग की दर से पारिश्रमिक पाने वाली, अनियत मजदूर, दिहाड़ी वाली मजदूरों की तरह। इस हिस्से के लिए श्रम कानूनों का अस्तित्व ही नहीं होता और वे समान मजदूरी, काम की मानवीय दशाओं, मातृत्व लाभ और सामाजिक सुरक्षा, श्रम के संरक्षण आदि जैसे कानूनों से वंचित हैं।

बॉक्स सं. 2.1

ग्रामीण और शहरी, दोनों क्षेत्रों में नियमित मजदूरी/सवेतन कर्मचारियों के वेतन और आकस्मिक मजदूरी में महिलाओं की मजदूरी उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में अधिक असमान है।

अनौपचारिक क्षेत्र में मिलने वाले रोजगार के लक्षणों में अनियत मजदूरों का अधिक अनुपात, कम मजदूरी/वेतन, काम के अधिक घण्टे, कम कौशल और निम्न उत्पादकता आदि गिनाए जा सकते हैं। यहां न तो नौकरी की सुरक्षा है, न ही सामाजिक सुरक्षा। इस क्षेत्र में कार्य-स्थल पर यौन उत्पीड़न सर्वप्रमुख पेशागत जोखिम है। इस क्षेत्र में पेशे की अनन्य प्रकृति के चलते महिला कामगारों की, उनके अधिकारों हेतु लड़ने हेतु, लामबंदी को सुसाध्य बनाने के लिए कोई व्यापार संघ या श्रमिक संगठन भी नहीं होते। अपर्याप्त कानून और महिला कामगारों की रक्षा करने हेतु कानूनी सुरक्षाओं के अप्रभावी प्रवर्तन इस क्षेत्र में रोजगार के कुछ अन्य विशेषताएं हैं। उनकी गतिविधियों की विभिन्न प्रकृति के चलते, महिला कामगारों को निम्नलिखित व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

क) कारीगरी और प्रति नग की दर से उत्पादन करने वाली मजदूरों सहित गृह-आधारित उत्पादक

ख) फुटपाथ वाले लघु-विक्रेता और फेरी वाली

ग) अनुबंधित मजदूर और अनियत मजदूर

घ) घरेलू सहायिका, पट्टेदार, मेहतर, धोबन आदि.

ड) निर्माण कार्य और खेती तथा दूसरे प्राथमिक क्षेत्रों में हाथ से काम करने वाली मजदूर

च) पारंपरिक और गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में प्रक्रियागत कार्यों में लगी महिलाएँ।

रोजगार की स्थिति के आधार पर उपरोक्त समूहों को तीन व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

क) स्वरोजगार

ख) अपने घरों से बाहर मजदूरी करने वाले (निर्माण में लगे मजदूर, कृषि श्रमिक आदि) और घरों में रहकर काम करने वाले (गृह-आधारित मजदूर)

ग) परिवार में अवैतनिक काम करने वाले कामगार

असंगठित क्षेत्र, नीति निर्माताओं के सम्मुख सामाजिक न्याय की दो विकट समस्याएं प्रस्तुत करते हैं। इनमें से पहला है, कामकाजी आबादी का एक बड़ा हिस्सा अर्थव्यवस्था के हाशिए पर रहने के लिए मजबूर किया जा रहा है। और दूसरा है, असंगठित क्षेत्र में सस्ते श्रम की उपलब्धता को देखते हुए, अधिकांश नियोक्ता अपनी अधिकतर गतिविधियों को इन संगठनों की तरफ मोड़ रहे हैं। इसका अर्थ यह होगा कि भविष्य में पूरा का पूरा मजदूर वर्ग, विकास के उत्पादों में निरंतर कमतर हिस्सा प्राप्त करेगा। कोई भी लोकप्रिय सरकार लंबे समय तक इन संभावनाओं को नजरअंदाज नहीं कर सकती (निर्मला बनर्जी, 1985. पृष्ठ 7-8)।

रोजगार की प्रवृत्तियां

कार्य बलों के क्षेत्रीय वितरण के विश्लेषण से पता चलता है कि महिलाएँ अधिकांशतया कम वेतन वाली नौकरियों तक ही सीमित हैं। इस बात से आपको एक अंतर्दृष्टि मिल सकती है कि 1981 में, 81.6 प्रतिशत महिला कामगार (66.2 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में) प्राथमिक क्षेत्र (कृषि और संबद्ध आज़ीविकाओं) में लगी हुई थीं। द्वितीयक (उद्योग) और तृतीयक (सेवा) क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या मुश्किल से क्रमशः 8.9 प्रतिशत और 9.5 प्रतिशत थी। पुरुषों के मामले में ये अनुपात अधिक अर्थात् क्रमशः 13.9 प्रतिशत और 19.9 प्रतिशत हैं।

इतिहास की ओर गौर करते हुए कहा जा सकता है कि उद्योगों जैसे कि वस्त्रोद्योग और धातुकर्म उद्योगों में गिरावट, और कुम्हारों और लोहारों द्वारा किए जाने वाले अनगढ़ सेवाओं में गिरावट ने न केवल पुरुषों को बल्कि महिलाओं को भी बड़े पैमाने पर प्रभावित किया। हैरानी की बात है, गैर-कृषि रोजगार में महिलाओं की भागीदारी का प्रतिशत उस निवल स्तर तक फिर से पहुंच ही नहीं सका जिस उच्च स्तर पर वह 1911 में था, जबकि पुरुषों के लिए केवल एक अस्थायी झटका साबित हुआ। 1921 के बाद, गैर-कृषि रोजगार में पुरुषों की कुल संख्या और पूर्ण पुरुष रोजगार में उनका अनुपात दोनों में बढ़ोत्तरी हुई।

1911 से 1961 की अवधि के दौरान महिलाओं ने जितनी गैर-खेतिहर नौकरियां गंवाईं उनमें से केवल आठ प्रतिशत कार्यों की गणना 'विशिष्ट रूप से महिलाओं के लिए' कार्य की कोटि में की गई और बाकी बचे 92 प्रतिशत मामलों में पुरुषों ने महिलाओं को बहुत आराम से उनके पुराने काम से प्रतिस्थापित कर दिया। (निर्मला बनर्जी, 1985, पृष्ठ 14)।

ग्रामीण असंगठित क्षेत्र में आने वाले रोजगार का एक बड़े हिस्से पर महिलाओं का कब्जा है। ग्रामीण परिवेश में महिलाओं के रोजगार मूल रूप से कृषि, डेयरी, पशुपालन, मत्स्य पालन, सामाजिक और कृषिवानिकी, खादी और ग्रामोद्योग, हथकरघा, हस्तशिल्प और रेशम कीट पालन जैसे 9 क्षेत्रों में समाहित हैं। इनमें से पहले पांच क्षेत्रों को मोटे तौर पर कृषि और संबद्ध व्यवसायों के रूप में वर्गीकृत किया गया है, और अंतिम चार ग्राम एवं लघु उद्योग क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत हैं।

आगे आने वाले उप-अनुभाग असंगठित क्षेत्र में रोजगार के विभिन्न पहलुओं में महिला श्रमिकों की स्थिति से अवगत कराएंगे.

2.4.1 संस्थागत असंगठित क्षेत्र

कृषि

यह क्षेत्र सर्वाधिक प्रतिशत महिलाओं को अपने में समाहित करता है और यही महिलाओं के लिए सर्वाधिक सुलभ रोजगार क्षेत्र है। 1971 की जनगणना के अनुसार, 80.1 प्रतिशत महिला श्रमिक कृषि क्षेत्र में थीं जबकि संख्या रूप में 1951 में 18.3 मिलियन की बजाय 1971 में उनकी संख्या 9.2 मिलियन हो गई थी। इसके लिए बढ़ती हुई गरीबी जिससे भूमिहीनता और पारिवारिक खेतों पर उत्पादक रोजगार अवसरों में अपर्याप्त वृद्धि हो पाई को जिम्मेदार ठहराया गया जिसके चलते सक्रिय खेती से महिलाओं को विमुख कर दिया गया। महिला खेतिहर मजदूरों की संख्या में 1951 के 12.6 मिलियन से, 1971 में 15.7 मिलियन तक की वृद्धि भी रोजगार अवसरों के स्तर में गिरावट और बढ़ती हुई गरीबी की सूचक थी।

महिला कृषि मजदूरों के लिए मजदूरी की कम दरों के कारणों में रोजगार की असंगठित प्रकृति, ऐसे मामले जिनमें बाहरी मजदूरों को पारिवारिक सदस्यों द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता है, श्रम की मौसम के अनुसार जरूरत और कुछ कार्यों जैसे कि निराई, रोपाई

आदि का परंपरागत वर्गीकरण महिलाओं के श्रम के तौर पर एकाधिकृत करना रहा है। खेतिहर मजदूरों के लिए, न्यूनतम मजदूरी सरकार द्वारा तय की जाती है और इनकी आवधिक समीक्षा भी की जाती है लेकिन दुर्भाग्य से यह अधिनियम भारत के सभी राज्यों में प्रभावी रूप से लागू नहीं किया जाता।

समान कार्य के लिए मजदूरी में अंतर के अलावा, महिलाओं द्वारा परंपरागत रूप से किए जाने वाले कार्यों जैसे बुआई, निराई, रोपाई, ओसाई, गहाई, और कटाई आदि के लिए सामान्य तौर पर पुरुषों द्वारा किए जाने वाले कार्य जैसे जुताई की अपेक्षाकृत मजदूरी की कम दरों का निर्धारण करना भी महिलाओं के भेदभाव को और मजबूत करता है। कृषि क्षेत्र में महिला श्रमिकों द्वारा सामना किए जाने वाली दूसरी समस्या प्रतिदिन 7-9 घंटे के कार्य को दैनिक कार्य के बराबर मानने की परम्परा भी है। कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रवेश और खेतिहर कार्यों में इसके उपयोग की शुरुआत से भी खेती में महिलाओं की भागीदारी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

डेयरी उद्योग

डेयरी उद्योग में महिलाओं का योगदान, पशुओं के लिए चारे के संग्रह से लेकर, चारा काटने और जानवरों की सफाई और धुलाई और उनकी देखभाल तक विस्तृत है। यहां तक कि सहकारी दुग्ध समितियों में भी महिलाओं को शायद ही कभी सदस्य बनने की अनुमति दी जाती है और उन्हें प्रबंध समिति के सदस्य के रूप में सहकारी समितियों को संचालित करने का मौका शायद ही कभी दिया जाता है। सहकारी समितियों के दायरे से बाहर होने के कारण ही वे दूध के लिए उचित मूल्य प्राप्त करने में विफल रहती हैं क्योंकि अच्छे विपणन केन्द्र स्थानीय ऋणदाताओं के चंगुल में हैं।

भवन-निर्माण कार्य

भवन-निर्माण कार्यों में भाड़े के श्रमिकों के रूप में महिलाओं को इसके अस्थायी और लगातार स्थान बदलने की प्रकृति के चलते बहुत झेलना पड़ता है। इसके अतिरिक्त हर तरह के मौसम में अत्यधिक श्रम वाले कार्य तथा बिचौलियों और ठेकेदारों के शोषण जैसी कठिनाइयों से ग्रसित हैं। निर्माण कार्य स्थलों में जल्दी-जल्दी बदलाव और उनके कार्य की अस्थिरता उन्हें और उनके बच्चों को प्राथमिक सुविधाओं जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, राशन कार्ड आदि से वंचित रखता है। उनकी गिनती सामूहिक रूप से अकुशल मजदूरों के रूप में की जाती है जबकि वे कुछ विशेष कौशल वाले कार्य भी करती हैं। अधिक मजदूरी वाली और तथाकथित कुशलता आधारित कार्य, निरपवाद रूप से पुरुषों के लिए आरक्षित हैं। स्व-नियोजित महिलाओं पर बने आयोग ने इस संबंध में ध्यान आकर्षित किया था कि भवन निर्माण कार्यों में श्रमिकों के नियोजन में परिवर्तनशीलता पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं के मामले में अधिक स्पष्ट है। अर्थात इस क्षेत्र में जब कभी मजदूरों की मांग में कोई वृद्धि होती है, पुरुष श्रमिकों की तुलना में महिला श्रमिकों का उपयोग बहुत अधिक होता है। दूसरी ओर, जब कभी समग्र व्यवसाय में कोई गिरावट आती है, पुरुष श्रमिकों की तुलना में महिला श्रमिकों में गिरावट अधिक तीव्रता से प्रतिबिंबित होती है। हालाँकि इन मजदूरों की रक्षा करने के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, अनुबंधित श्रमिक अधिनियम और अंतर-राज्य प्रवासी मजदूर अधिनियम जैसे विभिन्न अधिनियम इस क्षेत्र में लागू हैं, परंतु व्यवहार में नियोक्ताओं द्वारा इनका खूब उल्लंघन किया जाता है।

उत्खनन एवं खनन

उत्खनन और खनन एक दूसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिसने महिलाओं को बहुत बड़ी संख्या में नियोजित किया हुआ है। भूमिगत खदानों में महिलाओं और बच्चों को काम करने से बचना

चाहिए परन्तु छिपे तौर पर भूमिगत खदानों में बाल श्रम का बहुतायत से उपयोग किया जाता है। इस क्षेत्र में महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाली प्रमुख समस्याओं में अनियत मजदूरी का उच्च दर; कम मजदूरी; काम की श्रमसाध्य और खतरनाक प्रकृति; कार्य सुरक्षा की कमी और श्रम कानूनों का न लागू होना शामिल हैं।

गृह आधारित कार्य

अंतर्राष्ट्रीय और घरेलू पूँजी दोनों अतिरिक्त और ऊपरी लागत को कम करने के लिए बहुत तेज़ी से घर से काम करने वालों को खोज रहे हैं जिससे कि मुनाफे की सीमा को अधिकतम किया जा सके। भारत में, जो महिलाएँ तमाम प्रकार के उत्पादों (जैसे कुर्ता, शर्ट, मेजपोश, साड़ी, रुमाल आदि) पर कढ़ाई की बढ़िया कलाकारी करती हैं, वे भी इसी तरह की स्थिति से पीड़ित हैं। एक आंकलन के अनुसार इस क्षेत्र में, कुल श्रमिकों में से 97 प्रतिशत महिलाएँ और सिर्फ 3 प्रतिशत पुरुष हैं जो कढ़ाई की तरह के कार्यों में जैसे कि काटने, मुद्रण, सिलाई आदि में लगे हुए हैं। कुल महिला श्रमिकों में से 95.8 प्रतिशत अनुबंधित श्रमिक हैं, महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति ने 1974 में इस ओर ध्यान दिलाया था कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले सभी मजदूरी का काम करने वाले श्रमिक प्रति व्यक्ति 40 रुपये प्रति महीना कमाते थे।

खाद्य प्रसंस्करण

खाद्य प्रसंस्करण एक अन्य क्षेत्र है जो सबसे पुराना गृह-आधारित उद्योग है, जहां महिलाएँ बड़ी संख्या में अपनी भूमिका निभाती हैं। इस उद्योग में सब्जियों, फलों, अचारों, चटनी, मसाले आदि के प्रसंस्करण जैसे विस्तृत प्रसार वाली वस्तुएं शामिल हैं। हाल के दिनों में यह क्षेत्र एक निर्यातोन्मुखी उद्योग के रूप में उभर रहा है,जहां इसके 30 प्रतिशत उत्पादों का निर्यात किया जा रहा है। सामान्यतया इस क्षेत्र के कार्य मौसम आधारित होते हैं और इन उद्योगों में लगभग 40 प्रतिशत से 50 प्रतिशत कर्मचारियों को नियमित काम नहीं मिलता है। इस क्षेत्र में अनुबंध को आगे दूसरे छोटे ठेकेदारों को सौंप देने की परंपरा प्रचलित है और उत्पादन के परंपरागत तरीकों में महिला श्रमिकों को अधिक तरजीह दी जाती है क्योंकि उन्हें बहुत कम मजदूरी देनी पड़ती है और उनकी मांग भी सामान्यतया कम रहती है।

2.4.2 गैर-संस्थागत असंगठित क्षेत्र

असंगठित क्षेत्र में आने वाले कुछ प्रमुख गैर-संस्थागत व्यवसाय निम्न प्रकार हैं।

घरेलू कार्य

घरेलू नौकर और कामगार, खासतौर पर शहरी अर्थव्यवस्था में, सीढ़ी के निचले पायदान पर होते हैं। काम का **लैंगिक विभाजन** और कार्य आवंटन का स्वरूप मुख्य रूप से घरेलू सेवा को, महिला प्रधान उद्योग की तरह प्रस्तुत करता है। घरेलू काम में तमाम प्रकार की नौकरियां जैसे झाड़ू लगाना, झाड़ना, खाना पकाना, कपड़े और बर्तन धोना, खरीदारी करना, बच्चों की देखभाल करना आदि शामिल हैं। संक्षेप में, इसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार के घरेलू कार्य आते हैं जो पितृसत्तात्मक समाज में एक महिला की भूमिका माने जाते रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, आंतरिक घरेलू कार्यों के साथ पारिवारिक कृषि आधारित काम भी शामिल रहते हैं।

यह श्रमिकों के सबसे दुर्बल समूहों में से एक है क्योंकि घरेलू कामों में लगी हुई इन लाखों महिलाओं की सुरक्षा के लिए सरकार की ओर से लगभग कोई कानून या नियम नहीं हैं। इस प्रकार के उद्योग की सबसे सामान्य विशेषताओं में बेहद कम मजदूरी दर, काम के लंबे

और अनियमित घंटे और श्रमिक-संगठनों का अभाव शामिल हैं। इस तरह के उद्योग की एक और विशिष्ट तथ्य यह है कि इनमें सारे कार्य उपठेकेदारों, बिचौलियों की श्रृंखला के माध्यम से कराए जाते हैं जो प्रकारांतर से महिला कामगारों का बड़े पैमाने पर शोषण करते हैं। घर पर किए जाने वाले कार्यों पर आधारित उत्पादों के कुछ उदाहरणों में शामिल हैं– बीड़ी के बण्डल, पेपर बैग, तैयार वस्त्र, कपास से रूई बनाना, हाथ की कढ़ाई, अनाज की सफाई, मसाला बनाना, माचिस की तीलियाँ बनाना, अगरबत्ती बनाना, कागज के रोल तैयार करना, छोटे विद्युत और इलेक्ट्रॉनिक आइटम्स की फिटिंग, औद्योगिक वस्तुओं पर लेबलिंग, कपड़ों पर जरी करना, कृत्रिम गहने पर काम करना इत्यादि।

बीड़ी बनाना

1974 में महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति ने अपने अध्ययन में कहा था कि बीड़ी बनाना, देश में सबसे अधिक मेहनत वाले उद्योगों में से एक के रूप में कुख्यात है। इसमें मजदूरी हमेशा निर्मित बण्डलों की संख्या पर आधारित होता है। काम के घंटे और बोनस भुगतान बिल्कुल अनियमित हैं। बीड़ी बनाने वाले श्रमिक सांस के संक्रमण, फेफड़ों के संक्रमण, तपेदिक और कैंसर जैसे रोगों से जूझते हैं।

माचिस बनाना

इस उद्योग का संगठन भी बिल्कुल बीड़ी उद्योग के समान है। तमिलनाडु के शिवकाशी में इसके बड़े कारखाने हैं जहां बड़े पैमाने पर बच्चे और महिलायें घर पर काम करती हैं, जबकि पुरुष कारखाने में काम करते हैं। यहाँ कोई श्रमिक संगठन नहीं है और इन श्रमिकों की सुरक्षा के लिए किसी प्रकार की व्यवस्था नहीं है। प्रति नग दर से मजदूरी, काम के अत्यधिक घंटे, रोजगार सुरक्षा की कमी और कल्याणकारी सुविधाओं का अभाव के चलते इनका अत्यधिक शोषण होता है।

सिलाई और कढ़ाई

रेडीमेड वस्त्र के मामलों में आमतौर पर महिलाएँ अपने घरों में सिलाई का काम करती हैं। महिलाएँ खुद व्यापारियों से कपड़े इकट्ठा करती हैं, उन्हें अपने घरों में सिलती हैं और तैयार उत्पादों को व्यापारियों तक पहुंचा कर अगले खेप की सामग्री इकट्ठा कर आती हैं। इस तरह इन कार्यों में शामिल जगह, परिवहन, सिलाई मशीनों के रखरखाव और धागे इत्यादि की पूरी लागत व खर्च महिलाओं को सहन करना पड़ता है। मजदूरी का भुगतान आमतौर पर सप्ताह या महीने में और निरपवाद रूप से प्रति नग दर से किया जाता है। चूंकि ये मजदूर बिखरे हुए और असंगठित होते हैं, अतः संगठित विरोध की संभावना न होने के कारण बहुत कम मजदूरी दी जाती है। मौजूदा श्रम कानूनों को भी इन पर लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि स्थापित मानदंडों और नियमों के अनुसार इन्हें श्रमिक माना ही नहीं जाता और यदि कभी इन कानूनों को लागू किया जाता है तो भी उनका बुरी तरह से उल्लंघन किये जाता है। इसके अलावा, इस क्षेत्र में महिलाएँ अधिक हैं क्योंकि इसमें अधिकतर घर पर किये जाने वाले काम हैं और इसलिए वे किसी भी समय अपने नियोक्ताओं की इच्छा पर काम पर रखी या निकाली जा सकती हैं। किसी औपचारिक अनुबंध के अभाव में, काम करने की उनकी स्थितियां अक्सर उत्पीड़क होती हैं और मालिक हमेशा जिम्मेदारियों से बच सकता है। महिला मजदूर सामाजिक सुरक्षा लाभों जैसे भविष्य निधि, ग्रेच्युटी, पेंशन, चिकित्सा सुविधाएं और सवेतन अवकाश से वंचित होती हैं। इन घरेलू श्रमिकों की एक अनूठी विशेषता होती है कि प्रत्येक श्रमिक दूसरे श्रमिकों से बिल्कुल अलग-थलग होता है और उन्हें संगठित करने की समस्या लगभग अकरणीय है।

झाड़ू लगाने और कूड़ा उठाने का काम

हमारे देश में आमतौर पर सरकार और नगरपालिकाएं महिला सफाई कर्मियों की नियमित नियोक्ता होते हैं। राष्ट्रीय श्रम आयोग के अध्ययन समूह ने इस बात को उल्लिखित किया था कि महिलाओं को दिए जाने वाले मातृत्व अवकाश और दूसरे लाभ तथा काम की अन्य शर्तों को देखते हुए नगरपालिका अधिकारियों द्वारा महिला सफाई कर्मियों की भर्ती को हतोत्साहित करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। सामान्य तौर पर वे न्यूनतम मजदूरी अधिनियम द्वारा शासित होती हैं। मजदूरी और काम के घंटे एक स्थानीय निकाय से दूसरे स्थानीय निकायों में अलग-अलग होते हैं। अधिकांशतया उन्हें अंशकालिक नौकरियां दी जाती हैं वह भी साप्ताहिक आराम, मातृत्व अवकाश या सवेतन छुट्टियों, वर्दी या मकान किराया भत्ता के बिना।

ठेला लगाने वाली और फेरी वाली महिलाएँ

घूमकर बेंचने वाली महिलाएँ और फेरीवाली, सब्जी, फूल, फल, कपड़े, बर्तन, चूड़ियां, खिलौने और तैयार भोजन इत्यादि के व्यापार में लगी हुईं महिलाएँ अत्यधिक दुर्बल और शोषण के प्रति प्रवणशील समूह के तौर पर एक दूसरा समूह निर्मित करती हैं जो अधिकारियों और समुदाय द्वारा लगातार शोषित होने को अभिशप्त होती हैं। इस सन्दर्भ में स्व-नियोजित महिलाओं पर बनी राष्ट्रीय समिति ने ध्यान दिलाया था कि भारतीय पुलिस अधिनियम, भारतीय रेलवे अधिनियम और टाउन प्लानिंग अधिकारियों द्वारा इन्हें असामाजिक तत्वों के रूप में देखा जाता है। शहरी नियोजक अक्सर उन्हें नियोजन में रुकावट के तौर पर देखते हैं और उनकी गतिविधियों को अनधिकृत करार देते हैं, इस तथ्य के बावजूद कि यह प्रणाली रोजगार के अवसरों को उपलब्ध कराने के साथ ही माल के सस्ते और सुविधाजनक वितरण के अवसर प्रदान करती है।

एक महिला विक्रेता छोटे पैमाने पर एक मामूली राशि कमा पाने के लिए दिन में अधिकांशतया 10-12 घंटे मेहनत करती है। शहरी क्षेत्रों में, वे बड़े पैमाने पर गहन आबादी वाले क्षेत्रों जैसे कि सार्वजनिक बाजारों, परिवहन केन्द्रों, वाणिज्यिक केंद्रों और मनोरंजन क्षेत्रों में और उसके आसपास बसे होते हैं। इन विक्रेताओं की समस्याओं में पूँजी की कमी, विपणन के लिए जगह और पुलिस और अन्य अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न जैसी समस्याएं शामिल हैं।

स्वरोजगार में नियोजित महिलाएँ

मोटे तौर पर देखा जाए तो हमारे देश में स्वरोजगार एक प्रमुख रोजगार क्षेत्र का गठन करता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के अड़तीसवें चक्र के अनुसार कुल 98.4 मिलियन महिला कामगारों में से 59 मिलियन महिला कामगार (60.1 प्रतिशत), स्वरोजगार में नियोजित थीं, जो पुरुषों की स्वरोजगार प्रतिशतता 55.9 प्रतिशत से कुछ अधिक थीं।

कुछ ऐसी समस्याएं हैं जिनका सामना स्वरोजगार में नियोजित महिलाओं को करना ही पड़ता है जैसे कि बुनियादी सुविधाओं की कमी और बाजार आधारित मांगों की अपर्याप्त जानकारी। इसके अतिरिक्त बच्चों के देखभाल की सुविधाओं के अभाव, असुरक्षित परिवहन, अपर्याप्त कार्यस्थल और प्रशिक्षण की कमी से महिलाएँ और अधिक असमर्थ हो जाती हैं। संस्थागत ऋण सुविधाओं के अभाव में बिचौलियों द्वारा शोषण का षिकार भी बनती हैं।

आगे पढ़ने से पूर्व पढ़े हुए अनुभागों का आंकलन करने के लिए निम्नलिखित अभ्यास करें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) रोजगार के दो व्यापक क्षेत्रों का नाम बताइए।

2) संस्थागत और गैर-संस्थागत रोजगारों के अन्तर्गत आने वाले कतिपय व्यवसायों के नाम बताइए।

आगे आने वाले अनुभागों में आप पढ़ेंगे कि असंगठित क्षेत्र में काम करते समय महिला श्रमिकों द्वारा किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

2.5 असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की समस्याएं

असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों को निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

निम्न आय अर्जनः असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों द्वारा निम्न आय अर्जन के कारण हैं:

क) कौशल की कमी के चलते निम्न उत्पादकता।

ख) समान वेतन अधिनियम और न्यूनतम वेतन कानूनों का कार्यान्वयन न होना।

ग) बिचौलियों / ठेकेदारों द्वारा शोषण।

घ) नए कुशलताओं और प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए प्रशिक्षण के अवसरों का अभाव।

ड) रोजगार की अनियत प्रकृति का उच्च अनुपात।

अब हम असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों द्वारा अर्जित निम्न मजदूरी के कारणों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

मशीनीकरण

शिक्षा के सीमित अवसरों के कारण नई खेतिहर तकनीकों को अपनाए जाने के चलते कृषि में महिलाओं की भागीदारी बहुत हद तक प्रभावित हुई है। 1961 से 2011 के पांच दशकों के दौरान आधुनिक जड़ी-बूटी और चावल मिलों, पिसाई, मछली पकड़ने वाले समुदायों के मशीनीकरण, पावरलूम के उपयोग ने लगभग 84,000 महिला हथकरघा बुनकरों को बेरोजगार कर दिया है।

प्रशिक्षण का अभाव

असंगठित क्षेत्र में अधिकांश कामगारों के पास पेशेवर प्रशिक्षण के नाम पर कुछ भी नहीं होता। कुछ व्यक्तिगत सेवाओं जैसे कि नर्सिंग और खाना पकाने के साथ-साथ कुछ गैर-घरेलू कामों जैसे सिलाई, बिजली की फिटिंग या कांच के कामों ने कुछ आरंभिक प्रशिक्षण नियमित तौर पर कराए जाते हैं। लेकिन अधिकांश श्रमिकों को जो भी कार्य वे करते हैं, उसके लिए उन्हें बहुत ही कम लगभग नही ंके बराबर औपचारिक प्रशिक्षण मिला होता है। ज्यादातर कामगारों ने घर पर ही परिवार के अन्य सदस्य से वह कुशलता सीखी होती है।

इस तरह के प्रशिक्षण के दो प्रभाव देखने में आते हैं। पहला तो यह कि कामगार तुरन्त किए जाने वाले कामों के लिए ही कुछ निर्देश प्राप्त करता है। अर्थात एक पूर्ण पेशेवर या व्यापार से संबंधित कौशल सीखने की कोई गुंजाइश नहीं होती। इस प्रकार, यदि महिला कामगार अपने लिए कुछ अच्छे कौशल वाले काम की मांग करती है तो उसके लिए उसे किन्हीं मान्यता प्राप्त संस्थाओं से कुछ अन्य प्रशिक्षण प्राप्त करने होंगे। ऐसा स्पष्ट रूप से दर्जी के मामले में देखा जा सकता है जो एक सिलाई मशीन पर सिर्फ सिलने का काम करती हैं और आमतौर पर न कटिंग सीखती है और न किसी प्रकार की कढ़ाई। दूसरा असर यह होता है कि कामगार सिर्फ अपने काम से संबंधित मूलभूत विषय की आधारभूत बातों को समझती हैं उनमें कोई नवाचार या नई सोच की गुंजाइश नहीं रह जाती।

श्रम कानूनों के संरक्षण का अभाव

सरकार ने महिला कामगारों के हितों की रक्षा और उनके संरक्षण हेतु तमाम कानूनों जैसे कि समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976, मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 और फैक्ट्री एक्ट, 1948 के अन्तर्गत महिला श्रमिकों के लिए विशेष प्रावधान इत्यादि को अधिनियमित किया है। असंगठित क्षेत्रों में अस्थायी और अनियत महिला कामगार मातृत्व सुरक्षा कानून द्वारा संरक्षित नहीं हैं जिससे गर्भावस्था के आखिरी और अग्रिम चरणों में भी उन्हें काम करते रहना पड़ता है। इतना ही नहीं बीमारी या गर्भावस्था के दौरान अनौपचारिक क्षेत्रों के मालिक न केवल कोई सुविधा प्रदान करने में विफल रहते हैं बल्कि इन स्थितियों को महिला कामगार को काम से निकालने के लिए पर्याप्त आधार भी मानते हैं। असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों को क्रेच सुविधाओं, सवेतन छुट्टियों और अन्य सामाजिक सुरक्षा लाभों से पूर्णतया वंचित रखा जाता है।

संगठन का अभाव

असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों में संगठन और संघटन का अभाव, उनकी संगठनात्मक ताकत में बाधा डालता है। असंगठित क्षेत्र में, महिला श्रमिकों को तरह-तरह से शोषित किया जाता है जैसे कि निम्न मजदूरी दर, वस्तुओं की गिनती के आधार पर मजदूरी, काम के लंबे घंटे, वेतन से संबंधित श्रम कानूनों का लागू न किया जाना, काम की स्थिति, बीमा, भविष्य निधि, मातृत्व अवकाश, क्रेच सुविधाएं इत्यादि की अनुपलब्धता।

संसाधनों तक पहुंच का अभाव

बैंक और अन्य औपचारिक संस्थान महिलाओं को ऋण देने के मामलों में ज्यादा भेदभाव करते हैं और उनसे ऋण के बदले गारण्टी के रूप में चल या अचल संपत्ति जमानत पर रखने को कहते हैं। परन्तु तथ्य यह है कि हमारे देश में महिलाओं की ऐसी संपत्तियों तक पहुंच ही नहीं है।

सहायक सेवाओं का अभाव

असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों के लिए बच्चों को लेकर एक और समस्या यह है कि चाइल्ड केयर या बच्चों के लिए डे केयर सेंटर जैसी सहायक सेवाओं तथा विशेषकर लड़कियों को स्कूल भेजने की सुरक्षित व्यवस्थाओं का अभाव है।

यौन उत्पीड़न

हालाँकि सभी क्षेत्रों की महिला श्रमिकों को ऐसी समस्या का सामना करना पड़ता है, अनौपचारिक क्षेत्र के कार्यस्थल महिलाओं के यौन उत्पीड़न के संदर्भ में अधिक संवेदनशील हैं। मछली सुखाने, भवन निर्माण, चूने-गारे के काम आदि में मुख्य ठेकेदार अपने अधीन कई उपठेकेदारों को रखते हैं, जो काम देने के बदले अक्सर महिला श्रमिकों का शोषण करते हैं और उनसे यौन आग्रह करते हैं।

1970 से 2013 की अवधि के दौरान, भारत में, मुख्य रूप से असंगठित कार्य में महिला कामगारों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। महिलाओं के आंदोलनों ने उनकी समस्याओं पर प्रकाश डाला और उनकी लामबंदी करने, उन्हें संगठित करने के प्रयास किए। नारीवादी अध्ययनों ने ऐसी श्रम प्रक्रियाओं और श्रम संबंधों के बारे में लोगों में जागरूकता पैदा की जो यौन शोषण को बनाए रखते हैं। 2013 में, भारत ने, कार्यस्थलों पर यौन शोषण की रोकथाम हेतु अधिनियम लागू किया जिसके लिए इस समय नियम निर्धारित किए जा रहे हैं। यह अधिनियम अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में काम करने वाली कामकाजी महिलाओं को अपने अन्तर्गत शामिल करता है।

विभिन्न स्तरों पर नीतियों में बदलाव लाने के लिए महिला श्रमिकों के पक्ष में किए गए विरोध और लामबंदियों के बारे में हम दूसरी इकाइयों में विस्तार से व्याख्या करेंगे।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) असंगठित क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार की प्रवृत्ति क्या है?

2) भारत में असंगठित क्षेत्रों में काम करने वाली महिलाओं को किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है?

अब हम संगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की स्थिति के बारे में पढ़ेंगे।

2.6 संगठित क्षेत्र में महिला कामगार

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में, भारत ने औद्योगीकरण और उसके चलते सामाजिक संरचना में हुए बदलावों के कारण तेजी से संक्रमण का एक दौर देखा। उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण हेतु व्यापक रास्तों के खुल जाने से महिलाएँ संगठित क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए अधिक सक्षम होकर उभरीं। समग्र तौर पर आर्थिक आवश्यकता और इस बात की जागरूकता, कि नौकरियां आर्थिक बेहतरी के साथ-साथ उच्चतर सामाजिक गतिशीलता और स्वंतत्रता प्रदान करती हैं, ने अधिक से अधिक महिलाओं को व्यवसायों के विशाल क्षेत्र में प्रवेश करने के अवसरों का लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया।

1940 के बाद पिछले कई दशकों के दौरान, महिला कामगार सवेतन श्रमबल में बढ़ी हुई संख्या में प्रवेश कर रही हैं। इस अवधि के दौरान मध्यम वर्ग, शहरी, शिक्षित, उच्च जाति की महिलाओं ने उल्लेखनीय तौर पर घर से बाहर जाकर किए जाने वाले कामों में अपनी भागीदारी बढ़ाई। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी और स्वतंत्रता से पहले की अवधि में महिलाओं को शिक्षा प्रदान करने के महत्व को मिली स्वीकृति ने मध्यम वर्गीय महिलाओं को ऐसे अवसर प्रदान किए कि लम्बे समय तक चलने वाली अर्थव्यवस्था में सवेतन कार्य की वृहत्तर दुनिया में प्रवेश कर सकें।

गैर-भेदभाव वाले संवैधानिक प्रावधान, तृतीयक क्षेत्रों में रोजगार अवसरों के विस्तार, उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने के लिए अधिक अवसरों, शहरी मध्यमवर्गीय परिवारों में पारिवारिक आय बढ़ाने के लिए बढ़ते दबाव, कुछ ऐसे कारक हैं जिनके कारण श्रम बाज़ार में मध्यम वर्ग की महिलाओं की भागीदारी और बढ़ी।

घर से बाहर निकलकर सवेतन नौकरियों में प्रवेश करने के लिए महिलाओं के पास और कई प्रेरक कारक थे। विवाहित शिक्षित महिलाओं के मामलों में लाभदायक रोजगार को चुनने के महत्वपूर्ण प्रेरणाएं निम्नवत हैं:

क) खाली समय का व्यस्त उपयोग

ख) आर्थिक स्वायत्तता

ग) गरिमा और स्वाभिमान के साथ जीना

घ) अपनी स्वयं की पद और प्रतिश्ठा प्राप्त करने के लिए

ड.) प्राप्त उच्च और व्यावसायिक शिक्षा का उचित उपयोग करना

च) कॅरियर और आत्मबोध की महत्वाकांक्षा

छ) समुदाय और समाज की सेवा और बड़े स्तर पर करना।

महिलाओं के रोजगार को 1970 के दशक में स्वीकार किया गया खासतौर पर आर्थिक संकट के दौरान और जो महिलाएँ व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर चुकी थीं मगर "काम नहीं करती थीं'' उन्हें अपनी शिक्षा और प्रशिक्षण बेकार करने वाली समझा जाने लगा। सार्वजनिक क्षेत्र के अधिक विस्तृत होते जाने के कारण भी मध्यम वर्गीय महिलाओं का रोजगार में प्रवेश अधिक बढ़ा। अर्ध-सरकारी उपक्रमों में भी महिला रोजगार की संख्या बढ़कर दोगुनी हो गई।

कुछ खास नौकरियों और विशेष प्रकार के कामों में ही महिलाओं का संकेंद्रण और अपनी कुशलता के अनुरूप काम न पाना महिलाओं के लिए चिंता के विषय हैं। सभी देश इस समस्या और इसके प्रभाव के बारे में समझ चुके हैं और इस समस्या से सख्ती के साथ निबटने के लिए पहले ही कार्रवाई शुरू कर चुके हैं। इस मुद्दे का जितना हिस्सा यूनेस्को से जुड़ा है, उतने के लिए उसने उल्लेखनीय महत्व दिया है। इस बात के सभी हामीदार थे कि सभी मानव चाहे वे पुरुष हों या स्त्री एकसमान हैं, और शिक्षा, प्रशिक्षण तथा अपनी कुशलता/योग्यता के अनुसार रोजगार के अवसरों के प्रति भी उनके अधिकार समान हैं। इस मुद्दे पर और जोर देने के लिए तथा सबके सम्मुख रखने के लिए यूनेस्को ने जापान, तत्कालीन जर्मन गणराज्य संघ और अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सहयोग से चार अलग-अलग स्थानों पर चार सम्मेलनों का आयोजन किया।

पैंतालिस साल पहले, शिक्षण के अलावा आमतौर पर केवल तीन और व्यवसायों क़ानून, स्वास्थ्य और मंत्रालयों को महिलाओं के लिए उल्लेखनीय तौर पर महत्व प्राप्त नौकरियों का क्षेत्र माना जाता था। उन दिनों महिलाओं को कानूनी रुकावटों और जन-भावनाओं की वजह से इन व्यवसायों में काम करने से बिल्कुल रोक दिया गया था। महिलाओं के लिए अध्यापन के कार्य की सिफारिश इसलिए की गई कि इसे इस तरह व्यवस्थित किया जा सकता था कि महिलाएँ सिर्फ समान जेंडर के लोगों के साथ आपसी संवाद कर सकें जो नारीत्व की उनकी परंपरागत भूमिका के साथ किसी प्रकार का संघर्ष उत्पन्न नहीं करता था। इसके अलावा अध्यापन के कार्य में काम के कम घंटे, छुट्टियाँ आदि अन्य आकर्षण थे जो वास्तव में यह भी संभव बनाते थे कि महिलाओं की पारंपरिक भूमिका में कोई व्यवधान नहीं आए।

भारत में संगठित क्षेत्र, जो प्राथमिक तौर पर मुख्यतया सार्वजनिक क्षेत्र और गैर-खेतिहर क्षेत्र की स्थापनाओं से मिलकर बनता है, देश की कुल वास्तविक कार्यबल का एक आठवां हिस्सा समाहित किए हुए है। इसमें भी महिलाओं की हिस्सेदारी वर्ष 1980-91 के दौरान 12-2 प्रतिशत रही। मोटे तौर पर एक समझ बनाने के लिए यह तथ्य जानना महत्वपूर्ण है कि संगठित क्षेत्र में महिलाओं के रोजगार की कुल संख्या 1971 में 19.30 लाख से बढ़कर 1986 में लगभग 33.41 लाख हो गई। (www.indiastatistics.com)

संगठित क्षेत्र के अन्तर्गत, सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं का रोज़गार 1971 में 8.62 लाख से बहुत तेजी से बढ़कर 1986 में 19.30 लाख हो गया। निजी क्षेत्र में भी महिलाओं के रोजगार में वृद्धि हुई हालाँकि इससे थोड़ी कम दर से अर्थात 1971 में 10.67 लाख से बढ़कर 1986 में 13.07 लाख हो गई।

चूंकि महिलाएँ कार्यालयों में बड़े स्तर पर अधिकांशतः शिक्षक, नर्स, क्लर्क और सेक्रेटरी के रूप में नौकरी करती हैं इसलिए सार्वजनिक क्षेत्र में कुल रोजगार में से महिलाओं के रोजगार में बहुत कम केवल 1 प्रतिशत (यानी 1980-81 में 9.7 प्रतिशत से लेकर 1984-85 में 10.8 प्रतिशत तक) वृद्धि हुई है। संगठित क्षेत्र में महिलाओं के उद्योगवार रोजगार के आँकड़े इंगित करते हैं कि 1971 और 1981 दोनों ही अवधि के दौरान, महिला श्रम का बड़ा हिस्सा कृषि से संबद्ध गतिविधियों के बाद सेवाक्षेत्र और विनिर्माण उद्योग में नियोजित था। परन्तु अब परिदृश्य बिल्कुल बदल गया है। 1991 के बाद, सेवा क्षेत्र और अन्य व्यवसायों जैसे, आईटी और अध्यापन में महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है।

विनिर्माण

महिलाओं के लिए रोजगार के प्रमुख स्रोतों में से एक क्षेत्र विनिर्माणका था। एक अंतर्दृष्टि के लिए देखा जा सकता है कि 1971-81 के दौरान, इस क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के अनुपात में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में वृद्धि दर्ज हुई। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला कामगारों के अनुपात में 1971 के 270 प्रति 1000 पुरुष से बढ़कर 1980 में .... प्रति 1000 पुरुष हो गया जबकि इसी दौरान 'शहरी क्षेत्र में 260 प्रति 1000 पुरुष से बढ़कर 330 प्रति 1000 पुरुष हो गया। हालाँकि इस क्षेत्र के अन्तर्गत परम्परागत उद्योगों जैसे कि भोजन, तम्बाकू और वस्त्रोद्योग में महिलाओं का प्रतिशत हिस्सा लगभग स्थिर रहा और 86 प्रतिशत से अधिक महिला कामगार विनिर्माण उद्योग में नियोजित थीं। काजू और कॉफी उद्योग में मशीनीकरण के चलते और उसके परिणामस्वरूप घरेलू उद्यम से दूसरी तरह के संगठनों में बदलाव से महिलाओं के रोजगार को काफी क्षति पहुंची। उद्योगों के गैर-परंपरागत समूहों जैसे वस्त्र, प्लास्टिक और रबर उत्पादों में महिला रोजगार के हिस्से में एक उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई।

अन्य उद्योगों जैसे उर्वरक और कीटनाशक, पेंट निर्माण, रसायनिक उत्पाद, छपाई, रंगाई और सूती वस्त्रों के विरंजन, मशीनरी के विनिर्माण, बिजली के उपकरण आदि में महिला रोजगार के संदर्भ में विकास हुआ है। गैर-परंपरागत उद्योग की ओर भी कुछ बदलाव हुए हैं। हालाँकि आधुनिक क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश कम कुशलता वाली नौकरियों तक सीमित था। उदाहरण के लिए, रबर, प्लास्टिक और पेट्रोलियम जैसे उद्योगों में महिलाओं का लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक रहा है जो कम आधुनिक तकनीकों का उपयोग और कम मूल्यवान उत्पादों का उत्पादन करते हैं।

व्यापार एवं वाणिज्य

व्यापार और वाणिज्य में महिला कामगारों की हिस्सेदारी ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में बढ़ी है। हालाँकि इस क्षेत्र में महिला कामगारों की संख्या अभी भी बहुत नगण्य है जैसे कि कुल कामगारों का मात्र 1 प्रतिशत हिस्सा। पिछले 20 वर्षों के दौरान महिला उद्यमिता पर तमाम चर्चाएँ हुई हैं।

सेवाओं और अन्य व्यवसायों में महिलाएँ

सार्वजनिक क्षेत्रों में पेशेवर, तकनीकी और संबंधित श्रेणियों जिसमें शिक्षिकाएँ भी शामिल हैं, में महिला कर्मचारियों की संख्या में 1960 से लगातार वृद्धि हो रही है। इसी तरह परिवहन, भंडारण और संचार में भी महिला कर्मचारियों की संख्या लगातार बढ़ी है। निजी क्षेत्र में, वह क्षेत्र जहाँ महिला कामगारों के अनुपात में तेज़ी से वृद्धि हुई है, वे हैं लिपिक और संबंधित क्षेत्र, प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक। प्रबंधक स्तर पर महिलाओं का नियोजन मात्र कुछ नए उद्योगों जैसे कि विज्ञापन, बाजार अनुसंधान, संक्रिया अनुसंधान, होटल प्रबंधन, आईटी और कॉटेज उद्योगों में हुआ है।

औद्योगीकरण और बढ़ती हुई नौकरशाही के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर सफ़ेदपोश नौकरियों का आगाज़ हुआ है जिसमें कुछ विशेष प्रकार की गतिविधियों में महिला कर्मचारियों का संकेन्द्रण हुआ। अध्यापन में महिलाओं का संकेन्द्रण, अवसर और प्राथमिकता दोनों तथ्यों को दर्शाता है। भारतीय समाज में अध्यापन कार्य को महिलाओं के लिए सर्वाधिक उत्तम काम माना गया है क्योंकि इसमें नारीत्व की पारंपरिक भूमिका के साथ सबसे कम टकराव होता है। हालाँकि, संगठित क्षेत्र में महिला कर्मचारियों के संघटन को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि इनमें से तीन चौथाई के करीब महिलाएँ ऐसी नौकरियों में हैं जिसमें माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। स्पष्ट रूप से महिलाओं के लिए माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा ग्रहण कर पाना शुद्धतः शहरी परिघटना है जो इस निष्कर्ष की ओर इंगित करता है कि ग्रामीण महिलाएँ व्यापक पैमाने पर सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों से बाहर हैं क्योंकि वे प्रधानतः शैक्षिक रूप से वंचित श्रेणी से संबंध रखती हैं। पंजीकृत व्यापार संघों में, जो नियमित रूप से अपना प्रभाव दिखलाते हैं, महिला सदस्यों की प्रतिशतता बहुत ही मामूली लगभग नगण्य है और उससे भी कम प्रतिनिधित्व उच्च पदस्थ नौकरशाही और अधिशासी सदस्यों में है।

अध्यापन में महिलाएँ

20वीं सदी की शुरुआत में स्थापित लड़कियों के स्कूल, प्रशिक्षण स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों ने महिलाओं को सक्षम बनाया कि वे अध्यापन व्यवसाय के लिए आवश्यक योग्यताओं को हासिल कर सकें। स्वतंत्रता के पश्चात वाले युग में भारत में महिला अध्यापिकाओं की संख्या में खूब वृद्धि हुई। यद्यपि महिलाओं ने बड़ी तेज़ी से इन व्यवसायों में प्रवेश किया परन्तु शीर्षस्थ पद तक पहुंचना उनके लिए हमेशा कठिन था। पिछले 20 वर्षों के दौरान परिदृश्य बदल चुका है। सार्वजनिक के साथ-साथ निजी क्षेत्र के शैक्षिक संस्थानों में विभिन्न पदों का नारीकरण कर दिया गया है। आजकल, स्कूलों और विश्वविद्यालय शिक्षा में महिला प्रबंधक काफी बड़ी संख्या में पायी जाती हैं।

इंजीनियरिंग में महिलाएँ

घर से बाहर संपादित किए जाने वाले कठिन श्रम की प्रकृति के चलते इंजीनियरिंग को आमतौर पर पुरुषों का व्यवसाय माना जाता था। 1990 के दशक से इस क्षेत्र ने भी व्यापक बदलाव का अनुभव किया है। अब महिलाएँ बड़ी अच्छी तादात में आईटी और बायो-टेक्नोलॉजी क्षेत्रों में प्रवेश कर रही हैं।

प्रशासनिक और केंद्रीय सेवाओं में महिलाएँ

आजादी से पहले सिविल सेवा परीक्षा लेने वाली संस्थाओं का महिलाओं से एक तरह का बैर या शत्रुता या विद्वेश हुआ करता था। केवल अविवाहित महिलाएँ या बिन बच्चे की विधवाएं इन सेवाओं में शामिल हो सकती थीं, और सरकार ने महिलाओं को चयनित नहीं करने का अधिकार आरक्षित कर रखा था भले ही वे परीक्षा प्रक्रिया का उत्तीर्ण करके योग्य घोषित हुई हों। 1954 में, सरकार ने एक प्रावधान के तहत महिलाओं पर प्रतिबंधों में ढील दी कि अगर विवाहित महिलाओं द्वारा सेवाओं की दक्षता में बाधा आई तो इन महिलाओं को इस्तीफा देने के लिए कहा जा सकता था। फिर भी इस नियम का उपयोग शायद ही कभी किया गया। अंततः यह वर्ष 1972 था जब महिला सांसदों द्वारा संसद में धमकी भरी निंदा किए जाने के बाद इसे हटा दिया गया। आईएएस कैडर में पहली महिला अधिकारी ने 1951 में ज्वाइन किया था और उन्होंने यह बताया कि चयन समिति ने उसे विदेश सेवा में शामिल होने के लिए मनाने की काफी कोशिश की थी क्योंकि उन्हें संदेह था कि क्या कोई महिला जिले में आईएएस अधिकारी के रूप में कानून और व्यवस्था की जिम्मेदारियों का पालन कर पाएगी?

इसी तरह भारतीय पुलिस सेवा भी कई वर्षों तक महिलाओं को स्वीकार करने से इनकार करता रहा। उनका तर्क यह था कि पुलिस सेवा और महिलाएँ परस्पर विरोधी या असंगत थीं। हालाँकि पहली महिला आईपीएस अधिकारी (किरण बेदी) ने 1972 में कार्यभार ग्रहण किया। वर्ष 1971 की जनगणना के अनुसार, पूरे भारत में प्रशासनिक और कार्यकारी पदों पर 1000 महिलाएँ, जबकि वित्तीय संस्थानों में प्रबंधकों और अधिकारियों के रूप में लगभग 400 महिलाएँ कार्य कर चुकी थीं। इसकी तुलना में वर्तमान परिदृष्य काफी उत्साहजनक है। पिछले 40 वर्षों में आई.ए.एस.,आई.पी.एस.,आई.ई.एस.,आई.एफ.एस. जैसी सेवाओं में बड़ी संख्या में महिलाएँ शामिल हो रही हैं।

क्लर्क, आशुलिपिक, टाइपिस्ट, रिसेप्शनिस्ट जैसी नौकरियां अधिक से अधिक शिक्षित महिलाओं को नियोजित करती हैं। केंद्र और राज्य सरकार की सेवाओं में, महिला कर्मचारियों का सबसे अधिक संकेंद्रण तृतीय श्रेणी यानी लिपिकीय लेखा और संबंधित कर्मचारियों के स्तर पर था।

कानूनी सेवाओं में महिलाएँ

19वीं सदी के दौरान, ब्रिटिश कानून ने इग्लैंड और भारत में महिलाओं के बार में प्रवेश करने पर रोक लगाई हुई थी। हालाँकि, तत्कालीन बॉम्बे की एक पारसी ईसाई महिला कार्नेलिया सोराबजी 1892 में विधि स्नातक करने के लिए ऑक्सफोर्ड गई और कानून की डिग्री हासिल करने वाली पहली भारतीय महिला बनी। वहां से वापस लौटने पर बंगाल के गवर्नर ने उन्हें महिलाओं के प्रतिपाल्य अधिकरण में कानूनी सलाहकार के रूप में नियुक्त किया।

विरोध और आंदोलनों के कारण, भारत सरकार ने 1923 में विधि व्यवसायी (महिला) अधिनियम पारित किया जिसके द्वारा महिलाओं पर लगे प्रतिबंध को हटा दिया गया। इसके बाद से महिला अधिवक्ताओं की संख्या लगातार बढ़ी और परिणामस्वरुप न्यायपालिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व भी अधिक हुआ।

स्वास्थ्य सेवाओं में महिलाएँ

मानव सभ्यता की सम्पूर्ण अवधि के दौरान स्वास्थ्य रक्षा और देखभाल के मामलों में महिलाएँ पहले पायदान पर थीं। पहली भारतीय महिला डाक्टर्स जिन्होंने संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड और स्कॉटलैंड में अध्ययन किए थे, 1880 और 1890 के दशक में यहां के अस्पतालों में काम करने लौटकर वापस भारत आईं। मिशनरियों के रूप में भी योग्य महिला चिकित्सक संयुक्त राज्य अमेरिका से भारत के अस्पतालों में काम करने के लिए आईं। इडा स्कडर, जिन्होंने भारत में उपयुक्त चिकित्सीय देखभाल के अभाव में बच्चे के जन्म के समय महिलाओं की दुर्दशा को साक्षात देखा था, मेडिकल स्कूल में अध्ययन हेतु अमेरिका लौट गईं और अध्ययन के पश्चात वेल्लोर में महिलाओं के लिए नर्सिंग और मेडिकल केयर होम खोलने के लिए भारत वापस आईं। इसका नाम बाद में क्रिश्चियन मेडिकल कॉलेज रखा गया।

1885 में लेडी डफ़रिन कोश बनाया गया और काफी संख्या में डफ़रिन अस्पताल खोले गए और डफरिन फण्ड की छात्रवृत्तियों से महिला चिकित्सकों को प्रशिक्षण दिया गया। प्रथमतः 1883 में महिलाओं को मेडिकल डिग्री के लिए बॉम्बे विश्वविद्यालय में दाखिल करवाया गया और 1885 में कलकत्ता मेडिकल कॉलेज महिलाओं को मेडिकल डिग्री प्रदान करने में आगे आया। दिल्ली में वर्ष 1916 में लेडी हार्डिंग कॉलेज खुलने के बाद भारत के उत्तरी हिस्से में महिलाओं के लिए पहला मेडिकल कॉलेज खोला गया। इन कॉलेजों से निकले स्नातक डफरिन फण्ड से वित्तीय सहायता प्राप्त अस्पतालों में नौकरी पर रखे गए।

स्वतंत्रता के बाद से मेडिकल कॉलेजों की संख्या बढ़ती गई। 1946 में कुल 1200 छात्रों के वार्षिक नामांकन के साथ सिर्फ पंद्रह मेडिकल कॉलेज थे। आज, स्थिति में इतना सुधार हो चुका है कि भारत के प्रत्येक राज्य में सैकड़ों मेडिकल कॉलेज हैं।

विज्ञान में महिलाएँ

19वीं सदी से पहले वैज्ञानिक समुदाय में अनन्य रूप से पुरुषों का वर्चस्व था। विज्ञान को केवल पुरुषों के लिए उपयुक्त क्षेत्र माना जाता था। वैज्ञानिक कार्य की कठोरता के चलते महिलाओं को उसके लिए भावनात्मक और बौद्धिक रूप से अनुपयुक्त माना जाता था। हालाँकि पिछले कुछ वर्षों में वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रवेश करने वाली महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, मगर अभी भी विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में महिलाएँ संख्या और अनुपात में पुरुषों से काफी पीछे हैं।

20वीं सदी का पहला दशक सकारात्मक बदलावों का साक्षी बना। लेकिन फिर भी जो महिलाएँ वैज्ञानिक पेशे में सफल हुईं उनमें असाधारण प्रेरणा, मान-अपमान से परे रह लेने की क्षमता और अद्‌भुत योग्यता और साहस होना चाहिए था। महिलाओं के लिए यह आवश्यक हो जाता था कि पुरुष वर्चस्व वाले क्षेत्र में काम चुनने के चलते पड़ने वाले तिहरे दण्ड से पार पाना होता था। इस तिहरे जुर्माने को इस तरह से वर्णित किया गया थाः क) विज्ञान को सांस्कृतिक तौर पर महिलाओं के लिए अनुपयुक्त कॅरियर के रूप में परिभाषित किया गया था; ख) एक धारणा यह भी थी कि पुरुषों की तुलना में महिलाएँ विज्ञान में कम सक्षम थीं; ग) वैज्ञानिक समुदाय के भीतर महिलाओं को अत्यधिक भेदभाव का सामना करना पड़ता था।

जबकि विज्ञान के अन्तर्गत चिकित्सा एक पसंदीदा और अधिक सम्मानित क्षेत्र था, कुछ अन्य क्षेत्र जिन्होंने महिलाओं को आकर्षित किया वे थे रसायन, जैव-भौतिकी, सांख्यिकी, वनस्पति विज्ञान, माइक्रो बॉयलॉजी और अन्य सामान्य जीव विज्ञान से संबंधित विज्ञान की शाखाएं।

मीडिया में महिलाएँ

आजादी के समय से ही महिलाओं के लिए एक कॅरियर के रूप में पत्रकारिता का क्षेत्र खुलने लगा था। मीडिया में भी बहुत कम महिलाएँ ऐसी थीं जिन्हें पत्रकार के तौर पर वर्गीकृत किया जा सकता था और अधिकांशतया केवल अधीनस्थ पदों पर कार्यरत थीं।

कुछ सबसे प्रतिष्ठित महिला पत्रकार थीं, जो उस समय महिलाओं और नवजवानों की पत्रिकाओं की संपादक थीं। उनमें ईव्स वीकली की गुलशन इविंग, फेमिना की विमला पाटिल और मनोरमा की राचेल थॉमस, यूथ टाइम्स की एन्स जंग और वनिता की श्रीमती के. एम. मैथ्यू थीं।

तथ्यगत तौर पर पहला समाचार पत्र सिंडीकेट श्रीमती कुसुम नायर और उनके पति द्वारा शुरू किया गया था। 1979 में महिलाओं के एक समूह द्वारा एक नारीवादी पत्रिका 'मानुशी' का प्रकाशन हिन्दी और अंग्रेजी में किया गया। अब हम इस बात के साक्षी हैं कि प्रिण्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में महिलाएँ जिम्मेदार और चुनौतीपूर्ण पदों पर विराजमान हैं।

भारत में ऐसी बहुत सी महिलाएँ थीं जो साहित्य की दुनिया में प्रतिष्ठित थीं और रेडियो, टेलीविजन तथा फिल्म उद्योग में भी महिलाओं द्वारा उल्लेखनीय योगदान दर्ज किया गया। मल्टीमीडिया चैनलों ने एंकर, संवाददाताओं और रिपोर्टरों के रूप में कॅरियर के लिए बड़े केन्द्र खोल दिए हैं लेकिन लगभग सभी मीडिया मालिक पुरुष हैं।

अपनी प्रगति की जांच कीजिए

एक या दो पंक्तियों में निम्न व्यवसायों में काम करने वाली महिलाओं के बारे में लिखें:

1) चिकित्सा

2) विज्ञान

3) अध्यापन

4) कानून

5) मीडिया

6) व्यापार और वाणिज्य

आइए, अब हम विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के घटक के बारे में पढ़ते हैं।

2.7 पंचवर्षीय योजनाएं (एफवाईपी) : महिला कामगार

यहां हम विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के लिए आवंटित बजट पर चर्चा करेंगे।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना तक महिलाओं को कल्याण के विषयों में से एक समझा जाता था और उन्हें वंचित समूहों के साथ एक कोटि में रखा गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-1961) को गहन कृषि विकास के समग्र उपागम से जोड़ा गया था। इस योजना में पहली बार श्रमिकों के रूप में महिलाओं को संगठित करने की आवश्यकता की पहचान की थी। इसने महिलाओं द्वारा झेली जाने वाली सामाजिक पूर्वाग्रहों और उन पर थोपी हुई अयोग्यताओं को भी समझा। योजना में कहा गया था कि महिलाओं को खतरनाक कामों से बचाया जाना चाहिए, उनके लिए मातृत्व लाभ और उनके बच्चों के लिए क्रेच सुविधा दी जानी चाहिए। इसमें यह भी सुझाव दिया गया था कि समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धांत और महिलाओं के लिए प्रशिक्षण के प्रावधान का तेजी से कार्यान्वयन किया जाए जिससे महिलाएँ उच्चतर कामों के लिए प्रतिस्पर्धा कर सकें।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-1966) ने महिलाओं की शिक्षा को उनके कल्याण हेतु प्रमुख रणनीति के तौर पर मान्यता दी। स्वास्थ्य कार्यक्रम मुख्य रूप से मातृत्व एवं बाल कल्याण, स्वास्थ्य शिक्षा, पोषण और परिवार नियोजन के प्रावधानों पर केन्द्रित था।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-1974) ने महिला शिक्षा को बढ़ावा देने की रणनीति का जारी रखा। प्रचालन के लिए आधार के रूप में मूलभूत नीति यह थी कि महिलाओं का कल्याण परिवार के अंदर ही प्रोत्साहित किया जाए।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-1979) ने महिलाओं को, उनकी आय की जरूरतों और उनके संरक्षण के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता पर जोर दिया। इसलिए इस योजना को पहली बार महिलाओं की आर्थिक भूमिका को महत्व देने के लिए याद किया जाता है। इस योजना की अवधि, अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक और भारत में महिलाओं की स्थिति पर बनी समिति द्वारा रिपोर्ट जमा करने के साथ-साथ पड़ी। रिपोर्ट में जोर देकर कहा गया था कि सामाजिक परिवर्तन और विकास की गत्यात्मकता ने बड़ी संख्या में महिलाओं को प्रभावित किया और असंतुलन और असमानताओं की एक श्रृंखला को वास्तविक धरातल पर उतार दिया जैसे कि क) घटता लिंग अनुपात, ख) निम्न आयु संभाव्यता, ग) उच्चतर शिशु और मातृ मृत्यु दर, घ) काम में घटती सहभागिता, ड) निरक्षरता और च) बढ़ता प्रवासन।

भारत की योजना के इतिहास में पहली बार, **छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85)** ने महिला और विकास पर एक अलग अध्याय की शुरुआत की। सरकार ने छठीं योजना अवधि के दौरान कार्यान्वयन के लिए महिलाओं के रोजगार पर एक कार्यदल की नियुक्ति की। इस योजना के दस्तावेज में दर्ज किया गया था कि महिलाओं की स्थिति में सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में से एक यह होगा कि रोजगार अवसरों में से उपयुक्त हिस्सा उनके लिए सुरक्षित कर दिया जाए, और इसे दर्शाने के लिए बजट आवंटन की निश्चित प्रतिशतता महिलाओं के लिए हो तथा पूरे भारत में चलने वाली गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों के बजट आवंटन में से 30 प्रतिशत आवंटन महिलाओं के लिए निर्धारित कर दिया गया। विकास को महिलाओं की शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य में उन्नति के तौर पर भी परिभाषित किया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) के संचालन ने अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक के दौरान व्यक्त महिलाओं के लिए समानता और सशक्तीकरण की चिंताओं का विश्लेषण किया। इसने महिलाओं में आत्मविश्वास बढ़ाने, उनकी अधिकारों और विशेषाधिकारों के बारे में

उनमें जागरूकता पैदा करने और उन्हें आर्थिक गतिविधियों तथा रोजगार के लिए प्रशिक्षित करने पर ध्यान केंद्रित करने की गुणात्मकता पर ज़ोर दिया। इस योजना अवधि में कुल परिव्यय का 2.4 प्रतिशत महिलाओं के विकास के लिए समर्पित किया गया था। योजना अवधि के दौरान, लैंगिक पूर्वाग्रह और जेंडर पक्षपात को समाप्त करने के लिए शैक्षणिक कार्यक्रमों की पुनर्संरचना और विद्यालय पाठ्यक्रमों को रूपांतरित करने का सुझाव दिया गया। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह था कि प्राथमिक स्तर पर लड़कियों के लिए शिक्षा मुफ्त कर दी गई। इसी योजना अवधि में स्वनियोजित महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना, भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति को जान पाने की दिशा में बहुत महत्वपूर्ण थी।

आठवीं योजना (1992-1997) ने विकास की बजाय सशक्तीकरण को अपने आदर्शों में स्थान देते हुए पूर्ववर्ती योजनाओं से परिवर्तन दिखलाया और शिक्षा, स्वास्थ और रोजगार जैसे आधारभूत क्षेत्रों में लाभ का प्रवाह महिलाओं की ओर सुनिश्चित करने का वायदा किया। महिलाओं के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में व्यय पहली योजना में 4 करोड़ से बढ़कर 8वीं योजना में 2000 करोड़ हो गया था।

नौवीं योजना (1997-2002) ने महिलाओं के सशक्तीकरण को अपना रणनीतिक उद्देश्य घोषित किया। इसने महिलाओं के लिए घटक योजना की अवधारणा को स्वीकार किया और सुनिश्चित किया कि सभी विकास क्षेत्रों से कम से कम 30 प्रतिशत धन आवंटन का प्रवाह महिलाओं के लिए हो। इसने चार गुने ऐसे कार्यक्रमों और योजनाओं का सुझाव दिया जो महिलाओं को सीधे प्रभावित करते थे। इन प्रस्तावित योजनाओं की कोटि को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है:

1) महिला केंद्रित योजनाएँ जिनमें आवंटित धन का 100 प्रतिशत महिलाओं पर खर्च होना जरूरी था।

2) महिला समर्थित योजनाएं जहां आवंटन और लाभों का कम से कम 30 प्रतिशत प्रवाह महिलाओं के लिए था।

3) जेंडर-तटस्थ योजनाएं पूरे समुदाय के लाभ हेतु थीं जिसमें पुरुष और महिलाएँ दोनों इन योजनाओं का लाभ उठाते हैं.

4) बाकी बचे राज्य आधारित विशिष्ट कार्यक्रम, जिनका महिलाओं की स्थिति/अवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है। (इकोनॉमिक्स फॉर जेंडर एंड डेवलपमेंट)

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) देश की महिलाओं के लिए सामाजिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण और लैंगिक न्याय पर केंद्रित थी। **ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012)** के दौरान महिलाओं के संबंध में जेंडर समानता की प्राथमिकता वाले क्षेत्रों जैसे कि संकट में पड़ने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य, राहत और पुनर्वास पर केन्द्रित था।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) अपनी योजना अवधि के दौरान महिलाओं के समावेशी विकास पर केन्द्रित थी जिससे कि उनकी स्थिति में समग्र परिवर्तन लाया जा सके जिससे उनके लिए जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो। आप इस पाठ्यक्रम के खण्ड 5 के इकाई 4 में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में महिलाओं के घटक के बारे में फिर से पढ़ेंगे।

इकाई के अंत में सवालों को हल करने से पहले इकाई का सारांश पढ़ें।

2.8 सारांश

इस इकाई में आपने अनौपचारिक और औपचारिक दोनों अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति, पद और उनके प्रतिनिधित्व के बारे में पढ़ा। इकाई में असंगठित क्षेत्र की महिला कामगारों की समस्याओं पर भी चर्चा की गई। संगठित क्षेत्र में महिलाएँ अनुभाग के अंतर्गत आपने यह भी पढ़ा कि क्यों भारत में पढ़ी-लिखी महिलाएँ घर से बाहर जाकर भी रोजगार करने का विकल्प चुन रही हैं। इसी अनुभाग में आगे विभिन्न उपजीविकाओं और व्यवसायों में महिलाओं के प्रतिनिधित्व पर विचार किया गया। अंततः संगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं पर चर्चा के साथ यह इकाई समाप्त होती है।

2.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

1) संगठित और असंगठित क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति पर विस्तार से वर्णन कीजिए।

2) भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान की समालोचनात्मक ढंग से जाँच कीजिए।

3) 1951 से 2014 की अवधि के दौरान पंचवर्षीय योजनाओं सरकार द्वारा अपनाए गए कल्याण रणनीतियों की चर्चा कीजिए।

4) भारतीय अर्थव्यवस्था में महिला कामगारों के क्षेत्रवार वितरण का वर्णन करें।

2.10 संदर्भ

Banerjee, Nirmala (1985). Women Workers in the unorganised sector, Hyderabad: Sangam Books.

Devi, Rajula A (1983). Women In the Informal Sector, Kurukshetra:

Government of India, (1974). Towards Equality, Report of the Commission on the Status of Women in India, Ministry of Education and Social Welfare.

Government of India, (1988). Shramashakti, Report of the National Commission on Self-Employed Women and Women in Informal Sector.

Government of India (1988). Report of the Core Group, National Perspective Plan for Women 1988-2000 A.D.

Singh, Anita, Andrea Menece and Kelles (1987). Invisible Hands: Women in Home based Production , New Delhi: Sage Publication.

Patel, Vibhuti (2009). Discourse on Women Empowerment, Delhi: The Women Press.

2.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

GOI (1974). Towards Equality, Report of Ministry of Education and Social Welfare.

Government of India, (1988). Shramashakti, Report of the National Commission on Self-Employed Women and Women in Informal Sector.

इकाई 3 भारतीय विमर्श-II

संरचना — नीलिमा श्रीवास्तव

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 भारतीय महिला कामगारः समकालीन चुनौतियाँ

3.4 रोजगार दरों में गिरावट

3.5 महिलाओं के कार्य में परस्पर आच्छादन

- 3.5.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
- 3.5.2 समकालीन स्थिति

3.6 नव-उदारवाद और महिला कामगार

3.7 भविष्य का आंकलन

- 3.7.1 महिलाओं की बढ़ती शैक्षिक स्थिति
- 3.7.2 जेंडरीकृत संगठनों पर उठते सवाल

3.8 सारांश

3.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

3.10 संदर्भ

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

21वीं सदी की भारतीय कामकाजी महिला कौन है? आखिर कौन सी बात घर से बाहर जाकर उसे काम करने को प्रेरित करता है? वह अर्थपूर्ण काम किसे मानती हैं? बचपन का समाजीकरण उसके काम में उसकी स्थिति को कैसे प्रभावित करता है? भारतीय परंपराएँ, भारतीय संस्कृति और भारतीय समाज उसके कामकाजी स्थिति में बने रहने को कैसे प्रभावित करते हैं? भारत में आज के कामकाजी महिलाओं की स्थिति समझने के लिए ऐसे और संबंधित पहलुओं के प्रश्न आवश्यक हैं।

इस इकाई में आप उन समकालीन चुनौतियों के बारे में पढ़ेंगे जिसका सामना भारत की महिलाओं को करना पड़ता है और यह भी कि वे इन संघर्षों से कैसे निबटती हैं। यह इकाई देश में पिछले दो दशकों के दौरान महिलाओं के गिरते रोजगार दरों और उसके पश्चात महिलाओं की कामकाजी स्थिति के लिए जाति और वर्ग के प्रभावों के बारे में भी छानबीन करती है।

इकाई का आखिरी अनुभाग भारत में कामकाजी महिलाओं पर नवउदारवाद और अन्य वैश्विक ताकतों के प्रभाव से जूझता है। अब हम इस इकाई के उद्येश्यों पर एक नज़र डालते हैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य हो सकेंगे किः

- भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के बाद के दौर में भारत में महिलाओं और उनके कार्य परिदृश्य की व्याख्या कर सकें;

- पिछले 20 वर्षों में महिलाओं के रोजगार दरों में गिरावट के कारणों का विश्लेषण कर सकें; और
- वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था में आए उदारवाद के परिणामस्वरूप महिलाओं के रोजगार में आए नए रुझानों पर चर्चा कर सकें।

3.3 भारतीय महिला कामगारः समकालीन चुनौतियाँ

पिछली दो शताब्दियों में दुनिया भर में लोगों के काम करने का तरीका बहुत नाटकीय रूप से बदला है। विकास की प्रक्रियाएँ, जो पहले पहल यूरोप में उभरीं और बाद में दुनिया भर में फैलती चली गईं, ने श्रम के उद्येश्यों और शर्तों दोनों को बदल डाला।

भारत में कामकाजी महिलाओं का एक उभरता हुआ समूह, सामूहिक तौर पर एक ऐसी ताकत का प्रतीक है जो चल रहे सामाजिक परिवर्तनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। अपने बाजारों को विदेशी निवेश, निजीकरण और परिणामस्वरूप वैश्वीकरण के लिए खोलने के साथ ही भारतीय अर्थव्यवस्था ने विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण की एक नई यात्रा शुरू की। भारत की नई वैश्विक अर्थव्यवस्था ने तमाम अवसरों को उत्पन्न करने के साथ साथ चुनौतियों को भी सामने रखा। उन्होंने सामाजिक-सांस्कृतिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत व्यावसायिक महत्वाकांक्षाओं की कसी हुई रस्सी पर संतुलन साधते हुए अच्छी तरह से उसका इस्तेमाल किया।

भारत में 478 मिलियन श्रमिकों के साथ दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा कार्यबल है लेकिन सन् 2000 की शुरुआत से श्रमबल में महिलाओं की घटती भागीदारी के चलते आर्थिक नुकसान हुआ है। (शेनॉय-पैकर 2014, पृष्ठ 6)।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप बाद में हुए भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और आधुनिकीकरण से श्रमबल में काम करने वाली महिलाओं की भागीदारी में भारी गिरावट आयी। लेकिन इसने "भारतीय नारी के नए अवतार'' को भी जन्म दिया, जो अपराधबोध से मुक्त होकर भौतिकवाद का आनन्द लूट रही, अभिभावकीय जिम्मेदारियों को उठाने को लेकर मोलभाव करती है, विवाह और मातृत्व को बाद के लिए टालते हुए सिर्फ और सिर्फ कॅरियर पर ध्यान केन्द्रित करने में व्यस्त है। लेकिन, वही आर्थिक सुधार जिसने उदार भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व पूँजीवाद के साथ एकीकृत किया, भारतीय समाज के इस नव-भूमंडलीकृत उच्च-मध्यम वर्ग की जीवन शैली में व्यापक पैमाने पर परिवर्तन ला रहा है जिसका दुखद प्रभाव गरीबों, अकुशल मजदूरों और अशिक्षितों के आर्थिक और सामाजिक शोषण के रूप में उनके जीवन पर पड़ा है। (मजूमदार, 2007) और इस गरीब, अकुशल और अशिक्षित भारतीय जनसंख्या का सबसे बड़ा हिस्सा महिलाओं का है। इसीलिए वे गहन सामाजिक, आर्थिक और यौन शोषण का सामना करती हैं।

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि यद्यपि वैश्वीकरण ने रोजगार के अवसरों हेतु नई संभावनाओं को खोला जिसने शिक्षित महिलाओं को लाभ पहुंचाया जबकि उसी सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में गरीब महिलाओं के रोजगार हेतु असंगत रूप से अनुचित प्रभाव डाला। इसी बात को दत्ता (2005) लिखते हैं कि शिक्षित मध्यम वर्ग की महिलाओं के रोजगार अवसरों में वृद्धि ने अकुशल या अर्ध-कुशल महिलाओं की सेवाओं की मांग में वृद्धि कर दी। उच्च-मध्यम वर्ग की महिलाओं का आधुनिक जीवन शैली, निम्न वर्ग की महिलाओं द्वारा नौकरानियों, रसोइयों, देखभाल करने वाली महिलाओं के रूप में सेवा के कारण संभव हुआ। इस तरह घरेलू कार्य 'मैकडोनाल्डाइजिंग' हो गए अर्थात फास्ट फूड कंपनियों की तरह घरेलू कार्य भी नियंत्रित, तैयार और तत्काल परोसे जाने योग्य हो गए। उच्च प्रोफ़ाइल

नौकरियों के माध्यम से हासिल की गई शक्ति और पदस्थिति के परिणामस्वरूप कामकाजी महिलाओं का यह वर्ग अपनी विशिष्ट कुशलताओं से कार्यक्षेत्र में व्याप्त अदृश्य सीमाओं (ग्लास सीलिंग) को तोड़ने में सफल होती रही मगर साथ-साथ 'अधिक से अधिक बांझ, अमानवीय, तकनीकी चालित और अतृप्त' होती गईं। इसी तरह हालाँकि इस पूरी प्रक्रिया ने निचले तबके की महिलाओं के लिए रोजगार के अधिक अवसर उत्पन्न करने में मदद की परन्तु उन्हें भी अधिक व्यावसायिक खतरों और व्यक्तिगत स्वास्थ्य मुद्दों का अधिक गंभीरता से सामना करना पड़ा।

3.4 रोजगार दरों में गिरावट

2011 की जनगणना के अनुसार, महिलाओं की आबादी कुल आबादी का 48.4 प्रतिशत है परन्तु देश में पुरुषों की तुलना में महिला श्रम की भागीदारी केवल आधी है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 66वें चक्र के आंकड़े दिखलाते हैं कि केवल 23 प्रतिशत महिलाएँ श्रम शक्ति में हैं। महिला श्रमबल की भागीदारी की वास्तविक दर (एफएलएफपी) ग्रामीण क्षेत्रों में 2004-05 में 33.3 प्रतिशत से घटकर 2009-10 में 26.5 प्रतिशत रह गई जबकि इसी दौरान शहरी क्षेत्रों में यह गिरावट 17.8 प्रतिशत से कम होकर 14.6 प्रतिशत रह गई। इस तरह कुल 23 मिलियन महिला कामगार इस दौरान कम हो गईं। (एमडब्ल्यूसीडी, 2014, पृष्ठ 2)।

वृद्धि और विकास आयोग (2008) उल्लेख करता है कि 1980 के दशक से श्रमबल में महिलाओं की भागीदारी अलग तरह से विकसित हुई है। **महिला श्रम भागीदारी दर (एफएलपीआर) जिसे गतिविधि दर** भी कहा जाता है, में वृद्धि औद्योगिक देशों और इण्डोनेशिया जैसे कुछ विकासशील देशों में हुई परन्तु भारत, चीन और रूस में इसमें कमी आई। यह अंतर मुख्य तौर पर अलग-अलग जनांकीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और विधिक प्रवृत्तियों और मानकों के चलते आया जो सुनिश्चित करता है कि महिलाओं की गतिविधियों को आर्थिक माना जाए या नहीं। (क्लावेर्न एंड की, 2012, पृष्ठ 77)।

कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी में कमी का पारंपरिक कारण उनसे घर और घरेलू कार्य से बंधे रहने की सांस्कृतिक और रुढ़िगत अपेक्षा है। श्रम बाजार से महिलाओं के बाहर जाने में कुछ अन्य कारक जैसे घरेलू आय में बढ़ोत्तरी, आंकड़ा संग्रह के गलत तरीके, काम के सीमित अवसर और महिलाओं का उच्च प्रजनन दर जिम्मेदार हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) ने कुछ अन्य कारकों जैसे गैर-परम्परागत क्षेत्र में रोजगार और बच्चे के जन्म के बाद फिर से श्रमबल का हिस्सा बन पाने की चुनौतियों को भी इसमें जोड़ा जिसके चलते महिलाओं की रोजगार दर में गिरावट आई है।

महिला कार्यबल भागीदारी दरों में गिरावट की एक अन्य वजह यह तथ्य है कि हालिया वैश्विक आर्थिक मंदी ने भारतीय विनिर्माण और निर्यातोन्मुखी क्षेत्रों पर निर्णायक प्रभाव डाला है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय मांग में कमी आ गई थी। इस वैश्विक आर्थिक मंदी के परिणामस्वरूप 3.7 मिलियन नौकरियों की कमी हुई जिसमें से 80 प्रतिशत महिलाओं के पास थी। (थॉमस, 2013 शेनॉय-पैकर 2014 में उद्धृत)।

एनएसएसओ के 66वें चक्र के आंकड़ों ने यह भी दर्शाया कि शिक्षा में नौजवान लोगों की संख्या बढ़ी है, जो एक तरह से श्रम के लिए अनुपलब्ध हो गए, और इसलिए भी श्रमबल भागीदारी दर में गिरावट आई। नीचे दिखाई गई तालिका में आइए इस पहलू में हुए आयु-वार बदलाव को देखें:

आयु वर्ग	2009-10 में विद्यालय में बच्चों की प्रतिशतता	2004-05 में विद्यालय में बच्चों की प्रतिशतता
14-15 वर्ष (दोनों)	89.3	82.4
लड़कियां	87.7	79.6
15-19 (दोनों)	59.5	46.2
लड़कियां	54.6	40.3
20-24 वर्ष (दोनों)	15.6	11.25
लड़कियां	12.8	7.6

स्रोतः योजना आयोग, 2011-एप्रोच पेपर से 12 वें पंचवर्षीय योजना (2012-2017)

हालाँकि, कुछ अध्ययनों से पता चलता है कि भारतीय महिलाओं द्वारा कार्यस्थलों में चुनौतियों का सामना करने के बावजूद उनकी संख्या में, कम से कम शहरी क्षेत्रों में तो लगातार बढ़ी है परन्तु यह वृद्धि 2001 और 2011 की जनगणना रिपोर्टों में महत्वपूर्ण रूप से प्रतिबिंबित नहीं होती। परन्तु "दिखाई देने वाली कामकाजी महिलाओं" का यह नया वर्ग वास्तविक रूप में भारत की सभी कामकाजी महिलाओं का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं। इस पहलू की सच्ची तस्वीर ऊपर से दिखने वाले उत्साहजनक तस्वीर की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही जटिल, बहुपक्षीय और विरोधाभासी है। इस तरह प्रत्यक्ष दिखने वाली ये नई वैश्वीकृत भारतीय कामकाजी महिलाएँ अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में काम करने वाली गरीब महिलाओं की वास्तविकता के साथ-साथ मौजूद हैं।

20वीं सदी के साठ के दशक और सत्तर के दशक के मध्य तक, उच्च जाति की महिलाओं पर आदर्शात्मक प्रतिबंध निम्न जाति की महिलाओं की तुलना में अधिक सख्त थे। क्योंकि उनकी महिलाओं का मजदूरी या वेतन के लिए काम करना तब अधिक अपमानजनक और परिवार की प्रतिष्ठा के खिलाफ था। वास्तव में श्रमबल से महिलाओं का बाहर होना सच्चे मायने में उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति का प्रतीक था। जैसे-जैसे शहरी भारतीय समाज अधिक प्रगतिशील होता गया, उच्च वर्ग की महिलाओं ने उन व्यवसायों को अपनाना शुरू कर दिया जिन्हें 'भद्र' माना जाता था और स्त्रियोचित विशेषताओं के सदृश थे। इन व्यवसायों ने पेशेवर गतिशीलता को बहुत कम बढ़ावा दिया और काम के लिए प्रवास या यात्रा करने की आवश्यकता न के बराबर थी। लेकिन भारतीय समाज के मध्यम वर्ग में शिक्षा के प्रचार प्रसार तथा वृद्धि और अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के बाद रोजगार के अवसर खुल जाने के साथ, भारतीय महिलाएँ अपने घरों से बाहर निकलकर उन व्यवसायों और काम के लिए आगे आने लगीं जिन्हें अभी दो दशक पहले तक पुरुषों के विशिष्टाधिकार की तरह देखा जाता था। **लीडल और जोशी (1989)** लिखते हैं कि कानून में बदलाव और गतिशील हो रहे समाज के चलते जहाँ कुछ दशकों पहले तक महिलाओं के व्यवहार पर थोपे जाने वाले निर्देशात्मक अंकुश ढीले पड़ने लगे थे, अधिक से अधिक शहरी महिलाएँ, अपनी पत्नी और माँ की पारंपरिक भूमिका से आगे निकलकर, कार्यबल का हिस्सा बनना स्वीकार करने लगीं।

यह अच्छी तरह से समझा जाना चाहिए कि सार्वजनिक स्थलों पर दिखने वाली मध्यम वर्गीय महिलाओं की भीड़ श्रमबल में उनकी भागीदारी का पूर्ण संकेत नहीं है। सामाजिक स्थिति और संगठनात्मक पदस्थिति के अनुसार महिलाएँ श्रम बाजार में नए कामों को हस्तगत करना जारी रखे हुई हैं। **बनर्जी (2002)** दावे के साथ कहते हैं कि महिलाओं का आर्थिक रूप से सुविधाविहीन या निम्नतर बने रहने का का कारण परिवार द्वारा अभी भी

उनके शरीर, उनकी यौनिकता और श्रम पर अपना कड़ा नियंत्रण थोपना है। (सीएफ. शेनॉय-पैकर, 2014, पृष्ठ 20)। इस प्रकार वर्ग संरचना और परम्पराओं में उनकी स्थिति, उन्हें दिए जाने वाले प्रशिक्षण और उनके समाजीकरण के परिणामस्वरूप महिलाएँ जब भी कार्यबल में जगह बनाती हैं आर्थकि रूप से निम्नतर बनी रहती हैं।

आगे पढ़ने से पहले निम्न अभ्यास करें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) 'सेवाओं के मैकडोनाल्डाइजेशन' से क्या अभिप्राय है?

2) भारत में महिलाओं के रोजगार में गिरावट के क्या कारण हैं?

आगामी अनुभाग में हम जाति, वर्ग, जेंडर और महिलाओं के काम के परस्पर आच्छादन के बारे में पढ़ेंगे।

3.5 महिलाओं के कार्य में परस्पर आच्छादन

भारत में महिला कामगारों पर किसी भी विमर्श में जेंडर के साथ-साथ जाति और वर्ग को घेरे हुए सामाजिक संलापों की संचयी सौदेबाजियां महत्वपूर्ण सामाजिक प्रक्रियाएं हैं। किसी अर्थव्यवस्था को अपनी पूर्ण क्षमता से कार्यरत होने के लिए जरूरी है कि महिलाओं की कुशलताओं और प्रतिभाओं को ऐसी गतिविधियों में शामिल किया जाना चाहिए जहां उनकी उन योग्यताओं का सबसे बेहतर उपयोग हो सके। जब महिलाओं के श्रम का कम उपयोग होता है या उन्हें उनकी योग्यताओं से इतर काम पर लगाया जाता है क्योंकि वे बाजारों या सामाजिक संस्थाओं में भेदभाव का सामना करती हैं जो उन्हें अपनी शिक्षा को पूर्ण करने से रोकती हैं, तो इसका परिणाम अर्थव्यवस्था को सिर्फ हानि के रूप में होता है। (विश्व विकास रिपोर्ट 2012, क्लेवर्न और किआ, 2012 में उद्धृत, पृष्ठ 79)।

किसी भी समाज में **लैंगिक संबंधों** (gender relations) का स्थान उत्पादन संबंधों के केन्द्र में होता है क्योंकि उत्पादन, कार्यसंगठन, प्रोत्साहन, पारिश्रमिक, शक्ति और अधिकार के साधनों पर मालिकाना हक की संरचनात्मक प्रणाली लैंगिक संबंधों से जुड़ी होती है।

शेनॉय-पैकर (2014, पृष्ठ 10) लिखते हैं कि विशेष जाति, समुदाय और धार्मिक समूह जिससे महिलाएँ संबंधित होती हैं कार्यबल में उनकी भागीदारी को उस सीमा तक जहां उनकी जाति और वर्ग परस्पर आच्छादित होते हैं, और उस हद तक जो उनके सामाजिक गठनों और संरचनाओं में व्याप्त होते हैं प्रभावित करते हैं।

3.5.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत में महिलाओं को जाति और वर्ग द्वारा स्तरीकृत कठोर सामाजिक व्यवस्था के कारण पुरुषों के रूबरू पारंपरिक रूप से गौण स्थिति दी गई है। मोहंती (2004) लिखते हैं कि मुख्य रूप से घर के काम और बच्चों को पालने और पोसने की भूमिका में महिलाओं की पुरुषों पर निर्भर रहने वाली छवि देश के सामंती और पूँजीवादी सामाजिक इतिहास के लम्बी अवधि का परिणाम है जो पुरुषों को समाज की उत्पादन प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले और इसलिए उनके पास अधिक ताकत होने के रूप में देखती है। देसाई और कृष्णराज (2004) कहते हैं कि जाति न केवल श्रम के सामाजिक विभाजन को निर्धारित करती है बल्कि कामों को मौलिक रूप से 'अनिवार्य रूप से पुरुषों के लिए' और 'अनिवार्य रूप से महिलाओं के लिए' चिन्हित करके श्रम के लैंगिक विभाजन (sexual division) को भी संभव बनाती है। (शेनॉय-पैकर, 2014 पृष्ठ 15 पर उद्धृत)

लीडल और जोशी (1989) का विचार है कि समाज में जाति आधारित पदानुक्रम विकसित करने में महिलाओं की अधीनता एक महत्वपूर्ण हथियार की तरह थी। महिला की जाति जितनी अधिक ऊँची होगी, परिवार और वंश की शुद्धता की जरूरत के लिए उसकी स्वतंत्रता पर उतना ही अधिक रोक लगाया जाएगा। इस प्रकार, निम्नतर जाति की महिलाओं को अधिक स्वतंत्रता और अपने काम के विषय में बिना प्रतिबंध के गत्यात्मकता की सुविधा होगी जबकि उच्च जाति की हिंदू महिलाएँ आवाजाही के लिए प्रतिबंधित और घर में ही अकेले छोड़ दी जाती हैं। भारत में ब्रिटिश उपनिवेशों से बाहर निकले मध्य वर्ग को देश के प्रशासन के लिए अंग्रेजी में शिक्षित भारतीयों को नियुक्त करने की आवश्यकता थी। अंग्रेजी में शिक्षित होने और अंग्रेजों के लिए काम करने के अवसर लगभग अनन्य रूप से विशेषतः उच्च जातीय ब्राह्मणों के लिए उपलब्ध थे। इस नए क्रम के अनुरूप या निर्मित श्रमिक वर्ग ने महिलाओं के काम पर विरोधाभासी प्रभाव डाला।

महिलाएं काम के सार्वजनिक क्षेत्र में सुविधाविहीन बनकर रह गईं और अपने निजी मामलों में भी पुरुषों द्वारा निर्धारित किए गए, निर्मित किए गए मूल्यों के अन्तर्गत सामाजिक नियंत्रणों के अधीन कर दी गईं। महिलाओं को निम्नतर स्थिति में पदावनत करने के पीछे जाति और वर्ग जैसे अन्य कारक भी जिम्मेदार थे। (शेनॉय-पैकर 2014, पृष्ठ 2)।

इसकी तुलना में व्यवहार के अन्य मानक भी थे जो उच्चतर जाति की महिलाओं पर लागू थे उन्हें शहरी, मध्यम वर्ग की महिलाओं पर लागू किया जाना था। आर्थिक रूप से स्वतंत्र महिलाओं को नियंत्रण में रखना दुरूह कार्य माना गया और उन्हें सामाजिक संरचना और पदानुक्रम की उपेक्षा करने में सक्षम समझा गया। लीडल और जोशी (1989) का कहना है कि महिलाओं को संगठित करने, उन्हें सक्रिय करने और उनके प्रतिरोध के आंदोलन मुख्यतः मध्यमवर्गीय कामकाजी महिलाओं के बीच से उठे। (इसके बारे में और अधिक सामग्री आप अगली इकाई सामूहिक लामबंदी और प्रतिरोध में पढ़ेंगे)।

3.5.2 समकालीन स्थिति

नई उदारीकृत अर्थव्यवस्था में समर्थन तंत्र के हट जाने से जाति को प्रथा विहीन कर दिया गया। (सेठ, 1999)। समकालीन भारत में सभी जातियों के लोग व्यक्तिगत के साथ-साथ सामूहिक रूप से सामाजिक पायदान में ऊपर की ओर गतिशीलता की इच्छा महसूस करने लगे। निजमन (2006) का तर्क है कि सामाजिक स्तरीकरण को चिन्हित करने वाली औजार के रूप में जाति को, विशेषकर अपरिहार्य रूप से शिक्षित शहरी सामाजिक क्षेत्रों में वर्ग द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। (शेनॉय-पैकर 2014, पृष्ठ 13 में उद्धृत)।

जाति और वर्ग में एक जटिल संबंध है और वर्ग ने स्वयं को एक सामाजिक और राजनीतिक लेंस के रूप में पुनर्जीवित कर लिया है।

यह नया उभरता वर्ग खुद को नई जीवन शैली और आधुनिक उपभोग शैली के साथ-साथ उन आर्थिक संपत्तियों से जोड़ता जा रहा है जो अभी पच्चीस वर्ष पहले तक परम्परागत भारतीय मध्यम वर्ग को उपलब्ध नहीं था। इस प्रकार आर्थिक वृद्धि के साथ, आर्थिक वर्ग भी बड़ी तेजी से सभी सामाजिक स्तरीकरण पर प्रमुखता प्राप्त करता जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप जाति आधारित हैसियत और अनुष्ठानिक शुद्धता का महत्व धीरे-धीरे घट रहा है। (कपाड़िया, 2002 पृष्ठ 151)।

वर्तमान संदर्भ में, शहरी महिलाओं के कार्यबल की भागीदारी में 'वर्ग-जाति गत्यात्मकता' ने उल्लेखनीय प्रतिशाखाएं प्रस्फुटित की हैं जहां उच्च वर्ग और उभरते हुए नए मध्यम वर्ग की महिलाएँ अपनी गतिशीलता और जातीय हुक्मनामों के सामाजिक और सांस्कृतिक नियंत्रण से लगातार बाहर निकल रही हैं और सफलतापूर्वक उच्च शिक्षा ग्रहण कर पेशेवर आकांक्षाओं को पूरा कर रही हैं।

मजूमदार (2007, पृष्ठ 23), महिलाओं द्वारा किए जाने वाले वेतनभोगी कार्य के क्षेत्र में बहुस्तरीय अंतर्विरोध के उभार के बारे में, उत्पादन के वैश्वीकृत संगठन से जुड़ी प्रक्रियाओं के बारे में तर्क देते हैं, जो उच्च दर से 'सीमित और संकुचित' होने की ओर प्रवृत्त है और उसी के परिणामस्वरूप पिछले दो दशकों में महिलाओं के रोजगार और श्रमबल में भागीदारी में गिरावट आई है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और वैश्वीकरण की ताकतों के प्रभाव के परिणामस्वरूप एक नया भारतीय मध्यम वर्ग उभरा, जो शिक्षित है और धीरे-धीरे उच्चतर गत्यात्मकता की ओर उभर रहा है। यही भारत का वह नया और समृद्ध मध्यम वर्ग है जो श्रम बाजार को गति दे रहा है। इस उभरते हुए नए मध्यम वर्ग की संरचना ने नए गठबंधन और प्रतिरोधियों को खड़ा करते हुए पुरानी जाति पदानुक्रम को खत्म कर दिया है। (मुखर्जी, 1999, पृष्ठ 1761)।

इस प्रकार, जाति और वर्ग ने हमेशा भारतीय समाज में महिलाओं के काम को प्रभावित किया है।

3.6 नव-उदारवाद और महिला कामगार

नव-उदार वह शब्द है जिसका उपयोग 1980 के दशक से वैश्विक अर्थव्यवस्था पर हावी रहने वाली संरचनाओं की विशिष्ट प्रवृत्तियों का वर्णन के लिए किया जाता है। नव-उदारवाद का केंद्रीय अभिलक्षण किसी देश की आंतरिक और बाह्य आर्थिक नीतियों में बाजार पूँजीवाद के मौलिक सिद्धांतों का सहज स्वीकरण है।

व्यावहारिक रूपों में नवउदारवादी नीतियों का अर्थ है कि कुछ देश अपने को वैश्विक उत्पादन की संरचनाओं, वित्त और निवेश तथा श्रम आवंटनों से तटस्थ रखने में सक्षम हैं। निवल परिसंपत्तियां, प्रतिस्पर्धात्मकता और व्यक्तियों, राष्ट्रों तथा निगमों का लचीलापन यह सुनिश्चित करता है कि वे वैश्विक प्रतिस्पर्धात्मकता की इस प्रणाली में विजेता हैं या फिर पराजित।

नव-उदारवाद में से उदारचेता पद दरअसल ऐतिहासिक रूप से अठारहवीं और उन्नीसवीं सदियों में यूरोप में उभरे आर्थिक और राजनीतिक खुलेपन और प्रतिस्पर्धात्मकता की संरचनाओं और व्यवहारों से व्युत्पन्न हुआ है। यह प्रवृत्तियां आज के पश्चिम, औद्योगीकृत देशों जैसे कि संयुक्त राज्य अमेरिका में पाई जाने वाली राजनीतिक अर्थशास्त्र के केन्द्र में आ चुकी हैं। उदारवाद बाजार तंत्र द्वारा शासित अर्थव्यवस्था की ओर संकेत करता है। अपने मूल में उदारवाद राजाओं के अत्याचार के विरोध में खड़ा है; एक दार्शनिक सिद्धांत के रूप में यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून का शासन और प्रतिस्पर्धात्मक राजनीतिक प्रक्रियाओं जैसे नागरिक अधिकारों को समर्थन प्रदान करता है। उदार अर्थव्यवस्था वह है जिसमें आर्थिक संक्रियाओं में सरकार का हस्तक्षेप कम से कम हो जाता है। बीसवीं सदी के अंत तक पुराने दशकों से चले आ रहे उदारवादी मानदण्डों को पश्चिमी, औद्योगीकृत देशों और विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका और इसके द्वारा नियंत्रित अंतर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे कि विश्व बैंक के वर्चस्व वाली वैश्विक अर्थव्यवस्था में निहायत ही नए अर्थ मिले। इसलिए इस अवधि के दौरान उभरे परिवर्तित वैश्विक संदर्भ को इंगित करने के लिए उदारवाद के साथ उपसर्ग "नव" को जोड़ा गया। (एवरेट्ट और चार्लटन, 2014, पृष्ठ 3)।

पूँजीवाद और उदारवाद ने व्यक्तियों और निगमों के लिए संपत्ति के निजी स्वामित्व की अवधारणा को जन्म दिया। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो कुछ लोगों के लिए ऐसा पहली बार हो रहा था कि वे उस भूमि पर खेती कर सकते थे जो उनके स्वामित्व और नियंत्रण में थी। दूसरे केवल अपने श्रम को बेच सकते थे वह भी अधिकतर अपमानजनक स्थितियों में। समय के साथ भौतिक उपभोग में हुए व्यापक सुधारों का उत्पादन की नई प्रणालियों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा जिसमें मानव शोषण और पर्यावरणीय क्षति भी शामिल थी। बीसवीं सदी के मध्य तक औद्योगीकृत पूँजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में निगमों, कारखानों और सरकार में काम कर रह अधिकांश व्यक्तियों के पास सुरक्षित श्रम संविदाएं थीं और ठीक-ठाक स्तर की सामाजिक सुरक्षा (स्वास्थ्य, बेरोजगारी, और सेवानिवृत्ति लाभ) भी थी; और उनके कार्यस्थल, सरकार के बनाए पारिश्रमिक तथा कार्यदशाओं के लिए कानूनों के अधीन थे। इन नौकरियों को मिलाकर जो बनता था उसे औपचारिक अर्थव्यवस्था की तरह विशेषित किया जाता था जिसे आधुनिक दुनिया को पारिभाषित करने वाले लक्षणों की तरह देखा जाता था। अंतर्राष्ट्रीय उत्पादन की संरचना में परिवर्तनों के चलते इक्कीसवीं सदी में भी काम की प्रकृति विकसित होती जा रही है।

अंतर्राष्ट्रीय उत्पादन और सेवाओं की इस पुनर्संरचना से संबंधित प्रवृत्ति वह है जिसे सामान्य तौर पर **'आउटसोर्सिंग' (बहिःस्रोतन)** के नाम से जाना जाता है। परिष्कृत कम्प्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी की सुविधाओं से लैस होकर आउटसोर्सिंग दुनिया के कुछ भागों में नौकरियों में तीव्र कमी का कारण बना तो कुछ दूसरे भागों में नौकरियों को पैदा करने का कारण बना। इसके अन्तर्गत नौकरियां बड़ी तेजी से स्थानांतरित हो सकती हैं इसके परिणामस्वरूप आउटसोर्सिंग को उन देशों और क्षेत्रों में भी सामान्यतया कार्य असुरक्षा के साथ जोड़कर देखा गया, जहां के लोग प्रारम्भिक तौर पर इससे लाभान्वित हुए थे। एक दूसरी उल्लेखनीय प्रवृत्ति थी अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन का महत्व। विशेषकर पिछली दो सदियों में हुए व्यापक पैमाने पर प्रवासन के पीछे औद्योगीकरण और रोपण कृषि के विकास की

केन्द्रीय भूमिका थी। हालाँकि आज वर्तमान समय में गुणवत्ता और परिमाण दोनों आधारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन बिल्कुल अलग है। नई जिम्मेदारियों को निभाने के लिए बहु-दिशाओं में आने जाने वाले प्रवासियों की संख्या अब पहले से बहुत अधिक है। जेंडर के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय प्रवासियों का वितरण लगभग समान है परन्तु पुरुष और महिला भिन्न-भिन्न काम करते हैं। समकालीन भूमण्डलीकरण की एक अन्य विशेषता है शक्ति केन्द्र के रूप में नए **'आर्थिक खिलाड़ियों'** का प्रवेश जैसे कि चीन, ब्राजील और रूस जिन्होंने लम्बे समय से चलते आ रहे पश्चिमी यूरोप और उत्तरी अमेरिका के वर्चस्व को कम किया है। (एवरेट और चार्लटन, 2014)।

निर्यातोन्मुखी औद्योगीकरण (ई.ओ.आई) में महिलाएँ श्रमबल के एक बड़े हिस्से का प्रतिनिधित्व करने लगीं और वस्त्रोद्योग तथा खाद्य उत्पादन जैसे श्रम-गहन उद्योगों में उनका श्रमबल में पहले से प्रभुत्व स्थापित था। कारखाना उत्पादन का स्त्रीकरण कई कारकों का परिणाम है। निर्यातोन्मुखी उद्योग अपने प्राथमिक चरणों में कामगारों की इतनी भारी मांग करते हैं कि पुरुष और महिला दोनों कामगारों की आवश्यकता पड़ती है। एक बार जब किसी विशेष उद्योग में महिलाओं को काम पर रख लिया जाता है तो फिर **''निष्चलता''** (stickness) (जेंडर आधारित कामगार रखने की प्रवृत्ति जारी रहना), **''प्लवन''** (spill over) (पूर्व औद्योगीकृतों के जेंडरीकृत नियोजन के निर्णय का बाद के उद्यमियों द्वारा नकल करना) और **''व्यापकता''** (स्त्रीकृत क्षेत्रों में तीव्र विस्तार) जैसे प्रभाव घटित होते हैं। मालिकों, प्रबंधकों और राज्य नियोजकों का, अपने जेंडर आधारित आदर्शों में महिलाओं को "फुर्तीली हाथों वाली" के रूप में चिन्हित किया जाता है और सभी क्षेत्रों और उद्योगों में, नियोक्ता और सरकारें विभिन्न श्रेणियों की महिलाओं – जवान, अधेड़, ग्रामीण और देशज सभी को एक उपयुक्त श्रमबल के रूप में नियोजित करने को प्रोत्साहित करते हैं। (एवरेट और चार्लटन, 2014, पृष्ठ 126)।

सामाजिक समालोचक एक दुर्बल महिला कार्यबल की तस्वीर पेश करते हैं, जो कम वेतन पर अधिक घंटे तक, अल्पकालिक अनुबंधों पर, अनुचित कटौती लक्ष्यों के साथ और संगठित होने पर अपनी नौकरियों को खतरे में डाले हुए भी काम पर लगी रहती हैं। दूसरी ओर अर्थशास्त्रियों का तर्क है कि निर्यातोन्मुखी उद्योगों में महिलाओं की नौकरियां अन्य विकल्पों से बहुत अच्छी हैं और उनमें मुक्तिकामी प्रभाव भी हैं। हालाँकि उपरोक्त दोनों तर्कों में समस्याओं को चिन्हित किया गया है परन्तु बाद वाला तर्क संरचनात्मक बाधाओं की परीक्षा किए बिना जोर देता है जबकि पहले वाले तर्क में शोषण और उत्पीड़न बिल्कुल स्पष्ट है। अभी हाल में विद्वानों ने वैश्विक बाजार कारखानों में महिला कामगारों के जीवन पर अधिक सूक्ष्मता से और जटिल तस्वीर प्रस्तुत किया है, यह उल्लिखित करते हुए कि महिला कामगारों को अन्तर्विरोध का अनुभव करना पड़ता है जैसे कि परिवार में उनके रुतबे में बढ़ोत्तरी या पतियों और पिताओं से अधिक स्वायत्तता के साथ-साथ घर और काम में लगातार जारी रहने वाली अधीनता। स्वयं कामगार भी कारखाने की विभिन्न स्थितियों पर विभिन्न तरीके से प्रतिक्रिया करते हैं अर्थात कुछ मामलों में लचीलापन तो कुछ में प्रतिरोध। (आप प्रतिरोध और लामबंदी के बारे में इस खण्ड की अगली इकाई में पढेंगे।)

आगे पढ़ने से पहले निम्नलिखित अभ्यास करें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) 'नव-उदारतावाद' से आपका क्या समझते हैं?

2) 'आउटसोर्सिंग' से क्या आशय है?

3) निर्यात उन्मुखी औद्योगीकरण क्या है?

आगामी अनुच्छेद में आप कार्यस्थल में जेंडर सम्बन्धित मुद्दों के बारे में पढ़ेंगे और यह जानने की कोशिश करेंगे कि इससे पुरुष और महिलाएँ कैसे अलग-अलग तरीके से प्रभावित होते हैं।

कार्यस्थल में जेंडर-विनिर्दिष्ट मुद्दे:

इस स्थिति का पुनरीक्षण हम दो क्षेत्रों में करते हैं। एक वह परम्परागत क्षेत्र है जहां महिलाएँ खेतिहर समाज के आरम्भ से ही काम कर रही हैं और दूसरा क्षेत्र वह है जो 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुए सामाजिक-आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप आया।

वैश्वीकरण और विकास ने कृषि को बदल डाला क्योंकि उनके पास दूसरे कार्य क्षेत्र भी हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाजारों के निर्माण ने कृषि-व्यवसाय को प्रेरित किया, जिसका सामान्य भाषा में अर्थ है कि खेती अब लाभ के लिए होने लगी। हालाँकि, कृषि-व्यवसाय प्रायः एक बड़ा व्यवसाय बन जाता है जिसमें ऊर्ध्व एकीकरण की संरचनाओं में बहुराष्ट्रीय निगमों को शामिल कर लिया जाता है। इनके कार्यों में बीज चयन और बीज वपन, भूमि-धारण, श्रम अनुबंध, उर्वरक और कीटनाशक, विपणन और परिवहन आदि शामिल हो जाते हैं। ये परिवर्तन महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए वृहत्तर बाजार भागीदारी हेतु अवसरों को पैदा कर सकते हैं। हालाँकि, विशेष रूप से महिलाओं के लिए आज की तारीख में भी इन बाजारों तक समान पहुंच बहुत ही सीमित है। कृषि व्यवसाय के प्रभाव पर वाद-विवाद से बहुत पहले विकास हेतु कार्यरत महिला विशेषज्ञों ने शिक्षा और तकनीकी सहायता, संपत्तियों पर अधिकार के संरक्षण और पूँजी के साधनों तक महिलाओं की गैर-बराबर पहुंच की ओर ध्यान दिलाया था। खेत जितना ही छोटा और बेकार होता है, नए बाजारों में प्रतिस्पर्धा करने

में महिलाओं को उतना ही अधिक नुकसान उठाना पड़ता है। सांस्कृतिक और सामाजिक बाधाएँ भी अक्सर बाजार तक महिलाओं की पहुंच को अवरुद्ध करते हैं विशेष रूप से जहां महिलाओं को परिवहन, वित्तीयन और विपणन के लिए पुरुषों पर निर्भर रहना पड़ता है।

अब एक दूसरे परिदृश्य का पुनरीक्षण करते हैं।

पिछले कुछ दशकों से प्रबंधन और उससे सम्बद्ध व्यवसायों में महिलाओं का अनुपात बढ़ रहा है। ऐसी घटनाएं उच्च शिक्षा में महिलाओं की संख्या में वृद्धि को प्रतिबिंबित करती हैं। भले ही महिलाओं ने पेशेवर, तकनीकी और प्रबंधकीय कार्यबलों में लम्बी छलांग लगाई है, फिर भी इन व्यवसायों में जेंडर आधारित बड़ा वेतन अंतर बना हुआ है। इस वेतन विसंगति का कारण कामों का जेंडर आधारित क्षैतिज और ऊर्ध्वाकार व्यावसायिक अलगाव है। महिलाएँ शिक्षण और नर्सिंग जैसे कमतर वेतन वाले व्यवसायों में केन्द्रित हैं। उदाहरण के लिए, प्राथमिक-विद्यालय के शिक्षकों में महिलाएँ बहुमत में हैं।

परन्तु, कारखानों तक पहुंच हेतु अनवरत चलने वाले मुद्दों, वेतन में असमानता, दोहरे-कार्यदिवस के बोझ और अनुबंधित कामगारों के नियोजन के बावजूद कारखानों का भौतिक कार्यस्थल कम खतरनाक होता है। उनकी औपचारिक शिक्षा और कार्यस्थल की कुशलताओं के चलते ऐसा मान लिया जाता है कि उनके पास अधिक व्यक्तिगत अभिकरण हैं। यह स्थिति अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के कामगारों के वृहत्तर बहुमत के बिल्कुल विपरीत है।

3.7 भविष्य का आंकलन

दो हालिया प्रवृत्ति महिलाओं के लिए भविष्य में श्रम भागीदारी में 'अच्छे दिन' के बारे में सुनिश्चित करते हैं।

यह देखा गया है कि 11 से 14 वर्ष की लड़कियों के स्कूल छोड़ने की दर 2004-05 में 11.2 प्रतिशत से घटकर 2010 में 5.9 प्रतिशत रह गया है, इस प्रकार इस बात का संकेत करती है कि लड़कियों की शिक्षा लोगों के बीच काफी गति पा चुकी है और भविष्य में यह लाभांश श्रम भागीदारी में परिवर्तित हो जाएगी। दूसरी तरफ प्रवासन के आंकड़ों पर नज़र डालें तो यह पता चलता है कि गांव से शहरों की तरह प्रवसित करने वाली अधिकांश महिलाएँ अभी भी शादी के कारण (60.8 प्रतिशत) प्रवास करती हैं जबकि उसके बाद अपने अभिभावकों या अर्जक सदस्य के साथ प्रवास करने वाली महिलाएँ (29.4 प्रतिशत) परन्तु कुल प्रवसित महिलाओं में से 2.7 प्रतिशत रोजगार के कारण और दूसरी 2.2 प्रतिशत उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए शहरों की ओर प्रवास करती हैं। (एमडब्ल्यूसीडी, 2014, पृष्ठ 3)। अब हम भारतीय महिला कार्यबल के बदलते परिदृश्य और इस परिवर्तन से जुड़े कारकों पर एक नज़र डालते हैं।

3.7.1 महिलाओं की बढ़ती शैक्षिक स्थिति

शैक्षणिक संस्थाओं में पढ़ाई जारी रखने वाले कामकाजी उम्र (15-24 वर्ष) के व्यक्तियों की जनसंख्या 2004-05 में 3 करोड़ से बढ़ कर 2009-10 में 6 करोड़ से भी ज्यादा हो गई है। (योजना आयोग, 2011)

लड़कियों की शिक्षा में वृद्धि और शैक्षणिक संस्थाओं में उनका लम्बी अवधि तक ठहरना शिक्षित महिलाओं के बेहतर नौकरी की आकांक्षाओं का पूर्वाभास है जो अपने आपको उच्चतर योग्यताओं और बेहतर कौशलों से मजबूत करने के लिए रोजगार संजाल से खुद को बाहर रखे हुए हैं। रोजगार के लिए और वह भी उच्चतर स्तर पर रोजगार के लिए

महिलाओं का बाहर आना उन संसाधनों से स्वयं जाहिर होता है जो, उनके परिवार और स्वयं लड़कियों ने इतने दिनों तक स्वयं को श्रम बाजार में निम्नतर स्तर और अकुशल या अर्ध कुशल स्तर पर प्रवेश करने से रोककर, निवेश किया है।

जैसे हम लोगों ने पिछले अनुभागों में पढ़ चुके हैं, वर्तमान समय में भारत में श्रमबल में पुरुषों की सहभागिता महिलाओं की अपेक्षा बहुत बहुत अधिक है परन्तु महिलाओं की परिष्कृत शैक्षणिक उपलब्धियां इस बात का संकेत हैं कि भविष्य में श्रमबल में उनकी सहभागिता में वृद्धि होगी। ऐसी महिला कामगार अधिक टिकाऊ और प्रतिष्ठित रोजगार के अवसरों की ओर देख रही होंगी और श्रम बाजार में भी आत्मविश्वास से लबरेज, बोलने में समर्थ तथा मोलभाव की शक्तियों से लैस होंगी।

यह भी कल्पना किया गया है कि विनिर्माण क्षेत्र में वृद्धि होगी जो अधिक कुशल श्रमिकों को नियोजित करेगा जिन्हें अभी प्रशिक्षण दिया जा रहा है या कुशल बनाया जा रहा है। इसके साथ ही महिला कामगारों के व्यावसायिक स्वरूप में परम्परागत क्षेत्र से विनिर्माण गहन क्षेत्रों की ओर परिवर्तन होगा।

12वीं पंचवर्षीय योजना का उपागम पत्र यह भी सुझाव देता है कि महिला श्रमबल भागीदारी दर में यह गिरावट अस्थाई है और यह विश्वास करने के सभी कारण मौजूद हैं कि श्रमबल में महिलाओं की भागीदारी में 12वीं योजना और उसके बाद के वर्षों में वृद्धि होगी।

3.7.2 जेंडरीकृत संगठनों पर उठते सवाल

यह कहना गलत नहीं होगा कि अधिकांश संगठनों का ढांचा जेंडरीकृत और मर्दाना है। इसलिए यह पुरुषों को बेहिसाब और बिना मेहनत के लाभ पहुंचाता है। नतीज़तन महिलाओं को अपना कॅरियर आगे बढ़ाने में अतिरिक्त चुनौतियों और परेशानी का सामना करना पड़ता है। तमाम संगठन और उनकी संस्कृति पुरुषों द्वारा पुरुषों के लिए तैयार की गई हैं और व्यापक तौर पर पितृसत्तात्मक समाज के मानदंडों को प्रदर्शित करते हैं। परिणामस्वरूप महिलाएँ अपने कार्यस्थल में असहज और ठगा सा महसूस करती हैं, जो उन्हें सुविधाहीनता का एहसास कराती हैं और उनकी कॅरियर की उन्नति में बाधाएं पैदा करती हैं।

ब्रिटन (1999) लिखते हैं कि संगठन जेंडरीकृत नहीं हैं बल्कि सटीक तौर पर 'पौरुषीकृत' या 'मर्दाना' हैं, जहां महिलाओं से जुड़े कौशलों की अपेक्षा मर्दाना कौशल समूहों को मानदंड बनाया गया है और उन्हें ही पुरस्कृत किया गया है। मर्दाना लाभों को नीतियों, विचारधाराओं, कामगारों के परस्पर संबंधों, संगठनात्मक संरचनाओं और पुरुष एवं महिला की अलग पहचानों को उत्पन्न कर और उसे बनाए रखकर जैसी तमाम वैयक्तिक और अवैयक्तिक तरीकों के जरिये कायम रखा जाता है।

कॅरियर में महिलाओं के आगे बढ़ने में आने वाली बाधाओं को मुख्य रूप से दो स्तरों पर पहचाना गया है। पहला है **संगठनात्मक संस्कृति** जो महिला कर्मचारियों के ऊपर की ओर उन्नति में अवरोध पैदा करती हैं जैसे कि वे उसके लिए अनुपयुक्त हैं क्योंकि कार्य संस्कृति पुरुषों द्वारा बनाई हुई है और उन पर उन्हीं का वर्चस्व है। यह ऐसी संस्कृति है जिसे कुछ लोगों को अपने शामिल करने और बाकियों को अपने से बाहर रखने के लिए पैदा की गई है। दूसरे, पुरुषों को समस्या का हिस्सा माना गया है परन्तु उन्हें समाधान का हिस्सा नहीं माना गया।

सैंडबर्ग (2013) कुछ 'आंतरिक अवरोधों' के बारे में लिखते हैं जो महिलाओं को अपना ही कॅरियर बाधित करने को विवश करती हैं और इसे उन्होंने 'नेतृत्व की महात्वाकांक्षा न होने'

के रूप में परिभाषित किया है। परन्तु यह प्रमाणित करने के लिए अधिकाधिक सुबूत हैं कि अधिकांश कार्यस्थल, व्यक्तिगत प्रयासों और उपलब्धियों की पहचान करते हुए योग्यता को पुरस्कृत करने वाले नहीं हैं। यहां उपदेशात्मक 'सलाहकारिता' और 'पुराने लोगों का संजाल' तथा ऐसी कार्य संस्कृति है जो आक्रामक और प्रतिस्पर्धात्मक तरीके से अधिक घण्टे काम करने को मूल्यवान मानता है और उन्हें ही पुरस्कार तथा पहचान मिलती है इस तरह से महिलाएँ अपने आप इस घेरबंदी से बाहर हो जाती हैं।

अभी बिल्कुल हाल में संगठनों ने महिला कर्मचारियों को निर्णय लेने के पदों तक उनकी तरक्की का समर्थन करने में रुचि दिखाई है क्योंकि उनका मानना है कि महिलाओं की कुछ खास लोगों के बीच उपस्थिति व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करती है और उत्पादकता में वृद्धि होती है। इस सम्बन्ध में कुछ पहल किए गए हैं परन्तु प्रगति बहुत धीमी है और अभी स्थिति संतोषजनक नहीं है।

3.8 सारांश

कार्य करना मानव जीवन का एक अविभाज्य अंग है। हम सब काम करते हैं, काम कर चुके हैं या फिर हमारे जीवन के दौरान हम काम करेंगे। हालाँकि, हममें से प्रत्येक के लिए काम का अलग-अलग अर्थ हैं; यह आयु और शारीरिक क्षमता, जेंडर, स्थान और वर्ग के आधार पर भिन्न-भिन्न होता है। काम वैतनिक या अवैतनिक हो सकता है और आमतौर पर यह दोनों का सम्मिलित रूप होता है। उदाहरण के लिए, तमाम लोग जो आय अर्जन के लिए काम करते हैं अपने घरों या खेतों में बहुत से काम करते हैं जो जीवित रहने के लिए आवश्यक होता है परन्तु उसके लिए उन्हें कोई पैसा नहीं मिलता।

भारत में महिला कामगार अभी भी स्वरोजगार और दैनिक मजदूरों के रूप में अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में केंद्रित हैं। परन्तु लड़कियों की शैक्षिक स्थिति में वृद्धि के साथ हालात धीरे-धीरे बदल रहे हैं। अभी बिल्कुल हाल में निर्णय लेने वाले पदों पर महिलाओं की उपस्थिति की महत्ता बढ़ रही है लेकिन कार्यान्वयन के स्तर पर अभी बहुत कुछ किया जाना है।

3.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

1) भारत में जाति और वर्ग महिलाओं की श्रमबल में भागीदारी को कैसे प्रभावित करते हैं? चर्चा करें। अपने अभिमत की पुष्टि के लिए उदाहरण दीजिए।

2) नव-उदारतावाद की व्याख्या करें और कैसे इसने भारत में कामकाजी महिलाओं के कार्य परिदृश्य को बदल डाला?

3) अनौपचारिक और औपचारिक क्षेत्रों में भारतीय कामकाजी महिलाओं के सम्मुख आने वाली समकालीन चुनौतियों पर चर्चा करें।

3.10 संदर्भ

Britton, D. M. (1999). Cats Fights and Gang Fights: Preference for Work in a Male Dominated Organization, Sociological Quarterly, 40(3).

Burke, Ronald J. and Major, Debra, A. (2014). Advancing Women's Career: Why Men Matter; in Burke, Ronald J. and Major, Debra, A (Eds) *Gender in Organizations*. Cheltenham, U.K, Northampton, U.S.A. Edward Elgar Publishing, Inc.

Datta, A (2005). MacDonaldization of Gender in Urban India: A Tentative Exploration Gender, Technology and Development, 9.

Everett, Jana and Chalton, Sue (2014). Women Navigating Globlisation Feminist Approach to Development. Maryland: Rowman and Littlefield.

Kapadia. K (2002) Translocal Modernities and Transformations of Gender and Caste. In Kapadia, K (ed), The Violence of Development: The Politics of Identity, Gender and Social Inequalities in India. London Zed Books.

Liddle, J. and Joshi, R. (1989) Daughters of Independence: Gender, Caste and Class in India. New Brunswick, New Jersey. Rutgers University Press.

Mazumdar, I. (2007) *Women Workers and Globlisation: Emergent Contradictions in India*, Kolkota: Bhatkal and Sen.

Mukherjee, R. (1999) "Caste in itself, Caste and Class or Caste in Class", Economic and Political weekly 3 (July): 1759-61.

MWCD (2014): 'Evaluation of Working Women Hostel Scheme' A Report Submitted by SOGDS, IGNOU for MWCD, GOI.

Planning Commission, 2011 - Approach Paper to 12th FYP (2012-17) http://planningcommission.gov.in/plans/planrel/12appdrft/appraoch_12plan.pdf accessed on 7th October, 2014.

Sandberg (2013) *Lean In: Women, Work and Will to Lead*. New York. Alfred Knopf.

Shenoy-Packer, Suchira (2014) *India's Working Women and Career Discourses* London. Lexington Books.

3.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Planning Commission, 2011 - Approach Paper to 12th FYP (2012-17)

Patel, Vibhuti (2005) Economics of Gender and Development, Centre for distance Education, SNDT Women's University, Mumbai.

इकाई 4 लामबंदी और प्रतिरोध

संरचना सुनीता ढल और नीलिमा श्रीवास्तव

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 पृष्ठभूमि : प्रतिरोध और आंदोलन

4.4 सैद्धांतिक अवधारणाएं

4.5 लामबंदी और प्रतिरोध : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

4.6 महिलाओं के अनुभव : लामबंदी एवं प्रतिरोध

4.7 समकालीन दौर में लामबंदी

4.8 सारांश

4.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

4.10 संदर्भ

4.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

आपने पहले भी पाठ्यक्रम एमडब्ल्यूजी-009 के खण्ड 3 की इकाई 4 में महिलाओं के प्रतिरोध और संघर्ष के बारे में पढ़ चुके हैं। यहां हम महिलाओं द्वारा कामगारों के रूप में किए गए लामबंदी आंदोलनों और प्रतिरोधों के बारे में चर्चा करेंगे। आप पढ़ चुके हैं कि सिल्विया वाल्बी ने कैसे घर का वातावरण स्वयं में पदानुगत रूप से वर्गीकृत है जहां आय अर्जक का पद 'पुरुष' से संबंधित है और महिलाओं को 'द्वितीयक आय अर्जक' तक पदावनत रखा गया है। महिलाएँ भले ही श्रमबल में सहभागिता करें परन्तु परिवार के लिए 'प्राकृतिक देखभालकर्ता और पोषणकर्ता' के रूप में उनकी अपेक्षित भूमिका और कुछ समुदायगत भूमिकाएं भी इन सबसे ऊपर होती हैं। समाज में उनकी यह दोयम दर्जे वाली स्थिति आर्थिक संस्थानों में भी विस्तृत होती चली जाती है और महिलाओं को 'आरक्षित श्रमिक सेना' के तौर पर देखा जाता है या फिर उन्हें ऐसे पेशों से संबद्ध रखा जाता है जो उनकी पालन-पोषण कर्ता और सेवा सुश्रुषा वाली परंपरागत भूमिका से संबंधित हो और इस प्रकार उनके साथ भेदभाव करते हुए, उन्हें उत्पीड़ित करते हुए हाशिए पर धकेल दिया जाता है।

इस इकाई में हम स्वयं को श्रमिकों के रूप में संगठित कर और लामबंदी करने के महिलाओं के प्रयासों के बारे में केस स्टडीज़ और विवरणात्मक बयानों द्वारा कुछ दृष्टांतों पर विचार करेंगे। और यह भी देखेंगे कि कैसे महिलाओं ने अपने कार्य परिदृश्य में बदलाव लाने के लिए प्रतिरोधों को जन्म दिया। अब हम इस इकाई के उद्देश्यों पर एक नज़र डालते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ चुकने के बाद, आप सक्षम होंगे कि :

- आप परिभाषित और व्याख्या कर सकें कि लामबंदी और प्रतिरोध से क्या तात्पर्य है;

- चर्चा कर सकें कि कैसे महिलाओं ने अपने आप को संगठित करके अपने संघर्षों से निजात पाई; और
- अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संघर्ष आंदोलनों के परिणाम की व्याख्या कर सकें।

4.3 पृष्ठभूमि : प्रतिरोध और आंदोलन

दुनिया भर में और विशेष रूप से दुनिया के विकासशील देशों में असंगठित क्षेत्र के कार्यबलों के एक बड़े हिस्से को श्रम संरक्षण कानूनों और नीतियों को लाभ नहीं मिलता। इससे अपने अधिकारों के मामले में और मजबूरी की अवस्थाओं में वे दुर्बल पड़ जाते हैं। काम के लम्बे घण्टे और नीरस काम की समस्या कम वेतन मिलने से और जटिल हो जाती है। महिला कामगारों को भी, जो अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में श्रमिकों का बड़ा हिस्सा बनाती हैं, अपनी जेंडर भूमिकाओं और अपेक्षाओं के चलते अधिक कष्ट सहना पड़ता है।

ऐतिहासिक साक्ष्य इस तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि किसी भी समाज में भौतिक प्रगति महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थितियों में सुधार लाती है। लेकिन, इस तरह से आने वाली सामाजिक-आर्थिक सुधार की स्थिति स्वमेव पुरुषों के साथ समानता और **लैंगिक न्याय** (gender justice) नहीं लाती। अपने **जेंडर अधिकारों** (gender rights) और सशक्तीकरण के लिए लड़ने की महिलाओं के आंदोलनों की योग्यता को व्यापक आर्थिक प्रक्रियाओं द्वारा अनुकूलित किया गया है जिसने श्रम बाजार में महिलाओं की मुखर सहभागिता को निर्धारित किया है। दुनिया भर में बाजारों को विभिन्न स्थानों में वित्तीय पूँजी का वर्चस्व, नए व्यापार संबंधों के उदय, वैश्विक उत्पादन श्रृंखलाओं और उत्पादन प्रक्रियाओं के विस्तार आदि ने नाटकीय रूप से बदल डाला है। (कस्टर, 2014)।

अनुचित काम की जरूरत और कम वेतन वाले बन्द गतिरोध वाली नौकरियां जिसमें आगे बढ़ने की गुंजाइश ही न हो ने बड़ी संख्या में कामकाजी महिलाओं को, चिरस्थाई होती जा रही अपेक्षाओं के उस तंत्र और असमानता के स्वरूप को चुनौती देते हुए, सामूहिक कार्रवाई करने को प्रेरित किया। इस प्रकार के संघर्ष न केवल लिंग व जाति आधारित व्यावसायिक अलगाव के हठीले स्वरूप और उसके परिणामस्वरूप होने वाले आर्थिक असमानता पर धावा बोलते हैं बल्कि उस जेंडर तंत्र को भी झकझोरते हैं जो पुरुषों के लिए ताकत और महिलाओं के लिए सुविधाविहीनता को बनाए रखता है। इस तरह की संगति या साहचर्य का असर यह होता है कि एक ही 'कामकाजी वर्ग' से संबंधित होने के बावजूद उनके लिए इसके अनुभव नितांत भिन्न और एक दूसरे के विपरीत होते हैं। (मैक्लीन, 2011)।

अपने भौतिक अवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वस्तुओं के उत्पादन और वितरण में मनुष्यों के एक दूसरे से संबंध विभिन्न ऐतिहासिक अवधियों में अलग-अलग रहे हैं। चंद्रा तलपड़े मोहंती (2011, पृष्ठ 178) लिखते हैं कि 20वीं शताब्दी के अंत को वैश्विक पूँजीवादी वर्चस्व और शोषण की यौन राजनीति के गहराते जाने से अभिलक्षित किया जा सकता है, परन्तु यह आशा और एकजुटता की नवीकृत राजनीति के आरम्भ का भी द्योतक है।

4.4 सैद्धांतिक धारणाएं

सामाजिक विषमताओं और शोषण के विश्लेषण में, मार्क्सवाद ने उत्पादन के विभिन्न आर्थिक तरीकों में काम के सामाजिक संबंधों को रेखांकित किया है। मार्क्सवादियों का तर्क है कि पूँजीवाद के अंतर्गत लाभ के तर्क ने बुर्जुआ वर्ग को बाजारों के विस्तार द्वारा भूमि, श्रम और पूँजी की उत्पादन संबंधी शक्तियों को तब्दील कर दिया और इस प्रकार भूमि को

भी बाजार की एक वस्तु बनाकर रख दिया। इसने कामगार वर्ग को सामंती और स्वतंत्र खेतिहर उत्पादन से दिहाड़ी मजदूर में बदलने को मजबूर कर दिया।

फ्रेडरिक एंगेल्स ने बड़े पैमाने पर कारखाना-आधारित उत्पादन के युग के दौरान अपने लेखन में तर्क दिया कि बाजार के सार्वजनिक दायरे महिलाओं का प्रवेश उन्हें घरेलू अर्थव्यवस्था की पितृसत्तात्मक बाधाओं से मुक्त करेगा और वर्गीय हितों के बंटवारे के इर्द-गिर्द पुरुष श्रमिकों के साथ उनकी सामूहिक कार्रवाई को प्रोत्साहित करेगा। मानकीकृत क्रमिक संयोजन (एसेम्बली लाइन) उत्पादन के युग के दौरान अस्तित्व में आए हुए मजदूर संघ आंदोलन निश्चित रूप से अपने कामगार वर्ग सदस्यता के बदले सामूहिक कार्रवाई में लग गया परन्तु यह पुरुष प्रधान सदस्यता थी और वही बनी रही।

परन्तु ये संघ उन देशों में, जहां अनौपचारिक आर्थिक गतिविधियों में प्रवेश आसान थी, मजदूरी बहुत ही कम थी और स्पष्ट नियोक्ता-कर्मचारी संबंध अनुपस्थित था, कामगारों के वृहत्तर बहुमत तक पहुंचने में नाकाम रहीं। (कबीर, सुदर्शन और मिलवर्ड, 2013, पृष्ठ 2)।

उपरोक्त संदर्भित स्थान पर ही कबीर आगे उन कारणों के बारे में लिखते हैं कि क्यों इन संघों की सदस्यता में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में बहुत कम थी। क्योंकि श्रम बाजार बहुत बुरी तरीके से जेंडर के इर्द-गिर्द विभाजित था और महिला कामगार अनुचित अनुपात में अनौपचारिक गतिविधियों में संकेन्द्रित थीं, जिन्हें इन मजदूर संघों ने व्यापक तौर पर अनदेखा किया। (2013, पृष्ठ 8)। इसके अलावा, श्रम बाजार के सीमित अवसर और अधिकांश अनौपचारिक नौकरियों में कानूनी संरक्षण और सामाजिक सुरक्षा की अनुपस्थिति ने महिलाओं द्वारा संगठित होकर किसी भी रूप में आवाज उठाने को एक बड़ी जोखिम वाली गतिविधि बना दिया। 'पारिवारिक आय' के लिए प्राथमिक आय अर्जक पुरुष श्रमिकों के साथ मिलकर संघर्ष करने और काम करने की महिलाओं की क्षमता पर विभिन्न 'संरक्षात्मक' प्रतिबंधों के आरोपण, इन सबने मिलकर मजदूर संघों में किसी पद तक महिलाओं की पहुंच को लगभग शून्य बनाए रखा।

1970 के दशक से, उत्पादन प्रक्रियाओं के विखंडन और लचीली श्रम बाजार रणनीतियों की खोज से विश्व अर्थव्यवस्था में परिवर्तन का आगाज हुआ जिसने पुराने समय के केन्द्रीभूत और स्थिर कार्यबल को एक छिन्न भिन्न, बिखरे हुए, काफी हद तक अनौपचारिक और अधिकांशतया महिला कामगारों वाले श्रमबल से प्रतिस्थापित कर दिया। ऐसे काम की संरचना सामूहिक पहचान और सामूहिक हित को उभरने से रोकती है।

अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में महिला कामगारों को संगठित करने में सबसे शक्तिशाली बाधा उनका वह 'भय' है जो महिलाएँ अपने जीवन अनुभवों के द्वारा आत्मसात की होती हैं। महिलाओं को शुरू से ही घर पर रहने वाले पुरुष सदस्यों, उनके नियोक्ताओं और उनके समाज से डरते हुए बड़ा किया जाता है। नतीजतन, वे लगातार अपनी आजीविका के साधन के खोने के डर, भुखमरी के डर, बीमारियों की वजह से बच्चों को खो देने के डर और अपने घरों से बाहर निकाल दिए जाने के डर को लेकर जीती रहती हैं। और फाके पड़ने का डर एवं बीमारियों की वजह से बच्चों के खोने का डर पाले रखती हैं। उन्हें बहुत कम कानूनी या सामाजिक संरक्षण प्राप्त हैं। उनके पास बहुत ही कम कानूनी या सामाजिक संरक्षण के उपाय होते हैं जो, घर और व्यापक अर्थव्यवस्था दोनों में शक्ति की आरोपित विषमताओं के समक्ष खड़ा होने पर उनकी सहायता करें। (कबीर एवं अन्य, 2013, पृष्ठ 7)।

अनौपचारिक आर्थिक व्यवस्थाओं में लामबंदी और प्रतिरोध की चुनौतियां उन संस्कृतियों में और भी बदतर होती गईं जहां बचपन से लड़कियों को महिला अधीनता वाली सांस्कृतिक

मानदंडों का पालन करते हुए बड़ा किया जाता है, जहां उनके जीवन को अन्य वर्चस्वशाली पारिवारिक सदस्यों, जो अधिकांशतया पुरुष सदस्य होते हैं, द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इस प्रकार उनके पालन-पोषण में उस साहस की कमी रह जाती है जो सार्वजनिक जीवन में शक्तिशाली व्यक्तित्वों के सम्मुख खड़ा कर सके।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने उल्लिखित किया है (आई एल ओ 2004, पृष्ठ 45) कि 'इस तरह के विविधतापूर्ण कार्यबल की समस्याएं और बाधाएं भी उतनी ही विविध प्रकार की होती हैं जितनी बाधाओं और अवरोधों का सामना वे संगठित होने में करती हैं।' फिर भी, इन चुनौतियों के समाधान और सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों के संदर्भ में महिलाओं की स्थिति को उन्नत बनाने के लिए हाल के दशकों में विभिन्न प्रकार के लामबंदी आंदोलनों का उदय हुआ है। फिर भी, पुरुषों के मुकाबले उनकी स्थिति में सुधार नहीं हुआ है।

बॉक्स सं. 4.1

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र ने महिलाओं के हालात और उनकी स्थिति के बारे में सार्वभौमिक चेतावनी जारी करने और सभी विकासात्मक कार्यक्रमों में महिलाओं के मुद्दों को शामिल करने में महती योगदान दिया है। वर्ष 1948 में एलेनोर रूजवेल्ट ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में महिलाओं के अधिकारों का मुद्दा उठाया। महिलाओं के अधिकारों के लिए आंदोलन 19वीं सदी के दौरान महिलाओं के सार्वजनिक मताधिकार के आंदोलन के रूप में शुरू हुआ। 1920 में स्थापित महिलाओं की स्थिति पर अंतर-अमेरिकी आयोग, उन समूहों में से एक था जो नव स्थापित संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में महिलाओं के लिए समान अधिकार का प्रावधान करवाने में सहायक बना। महिलाओं का अंतर्राष्ट्रीय परिषद (इंटरनेशनल काउंसिल ऑफ वीमेन) और महिलाओं का अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन (इंटरनेशनल एलायंस ऑफ़ वीमेन) गैर-सरकारी संगठनों में से थे जो संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक परिषद (ईसीओएसओसी) के सलाहकारी संस्थाओं की तरह थे इसलिए संयुक्त राष्ट्र में महिलाओं की स्थिति पर आयोग की सदस्यता (सीएसडब्ल्यू) में इन्हें शामिल किया गया था जिसे 1947 में संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अधिदेश को संतुष्ट करने के लिए स्थापित किया गया था। 1946 में, संयुक्त राष्ट्र ने महिलाओं की स्थिति पर आयोग का गठन किया। इसे दो बुनियादी कार्य करने थेः 'महिलाओं के राजनीतिक, आर्थिक, नागरिक, सामाजिक और शैक्षिक क्षेत्र के अधिकारों के बारे में आर्थिक एवं सामाजिक परिषद हेतु सिफारिशें और रिपोर्ट तैयार करना'; और 'महिला अधिकारों के क्षेत्र में उन तात्कालिक समस्याओं पर सिफारिशें करना जिन पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता हो' (संयुक्त राष्ट्र 1996: 13)। आयोग की चिंताएं 1987 तक उसी समान बनी रही जब तक कि इसे विस्तृत करते हुए इसमें समानता, विकास और शांति हेतु समर्थन करने तथा महिलाओं की उन्नति हेतु उपायों के क्रियान्वयन की निगरानी क्षेत्रीय, खण्डीय, राष्ट्रीय और वैश्विक तीनों स्तरों पर नहीं किया जाने लगा। (संयुक्त राष्ट्र, 1996) तीन अंतर्राष्ट्रीय आंदोलनों जिनके नाम महिला अधिकार आंदोलन, मानवाधिकार आंदोलन और उपनिवेशवाद के विरुद्ध आंदोलन थे, और संघर्ष में सहभागी रहीं महिलाओं ने महिलाओं के आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया। इसके अतिरिक्त तथाकथित तीसरी दुनिया के देशों में स्वतंत्रता आंदोलन का भाग रह चुकीं महिलाएँ अपने राष्ट्रों के निर्माण में पुरुषों के साथ शामिल हो गईं।

आगे पढ़ने से पहले पिछले कुछ अनुभागों की समझ के बारे में अपना आंकलन करने हेतु निम्नलिखित अभ्यास करें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) पुरुषों और महिलाओं को अलग-अलग लामबंदी संबंधी चुनौतियों का सामना क्यों करना पड़ता है?

2) महिलाओं के आर्थिक अधिकार की प्राप्ति में संयुक्त राष्ट्र का योगदान क्या है?

आगे आने वाले अनुभागों में आप उन उदाहरणों के बारे में पढ़ेंगे जहां महिला कामगारों ने अपने काम परिदृश्य में परिवर्तन लाने के लिए स्वयं को संगठित किया।

4.5 लामबंदी और प्रतिरोध : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

19वीं सदी के दौरान और 20वीं सदी के आरम्भ में पश्चिम में महिलाओं की लामबंदी और प्रतिरोध को समझने के लिए निम्न मामलों का अध्ययन करें। (**स्रोतः** http://womhist-alexanderstreet.com/absV8N1.htm).

जूतों के श्रमिकों में लैंगिक और पारिवारिक बंटवारे ने 1860 के नव इंग्लैंड हड़ताल को सम्भव बनाया था और जमीन पर साकार किया था।

मेरी एच. बेल्वेट लिखती हैं कि 1852 में हल्के चमड़े की सिलाई के लिए सिलाई मशीनों का इस्तेमाल शुरू करने और भाप चालित शुरुआती फैक्ट्रियों में इसके उपयोग के परिणास्वरूप ग्रामीण न्यू इंग्लैण्ड और लिन, मेसाचुसेट्स के जूता केन्द्रों के लिए अपने घरों में हाथ सिलाई कर जूते तैयार करने वाली महिलाओं के पूर्व-औद्योगिक कार्य समाप्तप्राय हो गए। काम से दूर कर दी गई कामगार महिलाओं ने इस खतरे (मशीनीकरण और केन्द्रीयकरण के) को पहचान लिया और मजदूरी कमाने तथा अपनी पारिवारिक पारिश्रमिक अर्थव्यवस्था में अपना योगदान देने के लिए अपनी क्षमता भर उसका विरोध किया। जबकि दूसरी ओर कुछ दूसरी महिलाओं के लिए छोटे कारखानों में चलने वाली मशीनी सिलाई ने अपने घर से बाहर अपेक्षाकृत ऊँचे वेतन पर पूर्णकालिक काम का अवसर प्रदान किया। न्यू इंग्लैण्ड

के प्रारम्भिक वस्त्र कारखानों में काम करने वाली महिलाओं की भांति एस्सेक्स काउंटी, मेसाचुसेट्स के कारखानों में लाई गईं जूता बनाने वाली महिलाओं ने कारखाना सुधार की मांग उठाई। इन दोनों समूहों ने 1860 के न्यू इंग्लैण्ड जूता मजदूरों की हड़ताल, गृहयुद्ध से पहले का मजदूरों की अशांति के सबसे शक्तिशाली प्रदर्शन, में भागीदारी की।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में होने वाले औद्योगीकरण की प्रक्रिया के दौरान घटित यह घटना घरों और जूता कारखानों में मजदूरी कर रही महिलाओं के मध्य जेंडर और वर्ग के बीच गठबंधन की शक्ति का प्रदर्शित करती है।

1938 की राष्ट्रीय डॉलर स्टोर्स हड़ताल का आयोजन करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय महिला परिधान श्रमिक संघ और चीनी परिधान श्रमिक मिलकर एकजुट हो गए।

यद्यपि कैलिफ़ोर्निया के मजदूर आंदोलन ने अप्रवासी चीनी मजदूरों को खलनायक बना दिया था, परन्तु इसके जवाब में बराबरी हेतु दबावों ने मजदूर संघ के नेताओं को चीनी श्रमिकों को संगठित करने की मांग करने का उपयुक्त कारण दे दिया। सैन फ्रांसिस्को विनिर्माण क्षेत्र में निम्न वेतन वाले चीनी मजदूरों के क्षेत्र का होना शहर के श्रमिक नेताओं के बीच चिंता का कारण था और यह चिंता विश्वव्यापी मंदी के दौरान उच्च बेरोजगारी की अवधि में बढ़ गई। एक समय ऐसा आया जब एक राष्ट्रीय संघ, अंतर्राष्ट्रीय महिला परिधान श्रमिक संघ (आईएलजीडब्ल्यूयू) और चीनी महिला वस्त्र कामगारों की आकांक्षाएं मिलकर एक हो गईं और परिणामस्वरूप पहला तो यह हुआ कि महिलाओं को संगठित करने का महत्वपूर्ण अभियान चला और दूसरा, सैन फ्रांसिस्को के चाइनाटाउन में सबसे बड़े वस्त्र निर्माता के विरुद्ध सफल हड़ताल का आयोजन हुआ। राष्ट्रीय डॉलर स्टोर्स की हड़ताल ने संयुक्त राज्य अमेरिका में चीनी और चीनी-अमेरिकी महिलाओं के श्रम इतिहास में महत्वपूर्ण बदलाव को चिन्हित किया। यह महत्वपूर्ण बदलाव था कि इस हड़ताल ने प्रदर्शित किया कि चीनी महिला वस्त्र कामगार महिलाएँ अपनी मजदूरी और कार्यदशाओं में सुधार लाने के लिए संगठित हो सकती थीं। एक बदलाव यह भी था कि इसने चीनी महिला वस्त्र कामगारों तथा महिलाओं के वस्त्र उद्योग में राष्ट्र की अग्रणी संघ के बीच एक संपर्क स्थापित किया।

मैरी वुलस्टोनक्राफ्ट की प्रकाशन विंडिकेशन ऑफ़ द राइट्स ऑफ़ वीमेन (1792) और जॉन स्टुअर्ट मिल का प्रकाशन द सबजेक्शन ऑफ़ वीमेन (1869) जैसे साहित्यों की समीक्षा से लेकर आज तक यह पाया गया है कि सामाजिक आंदोलनों और व्यक्तिगत नारीवादियों ने, महिलाओं के अधिकारों की उन्नति के लिए नए शक्तिशाली संदर्भों को प्रस्तुत करने के लिए, भूमि और समुंदर के आर-पार अप्रवास किया।

आगे आने वाले अनुभागों में आप भारत में विशिष्ट मामलों के अध्ययन के साथ दुनिया भर के विभिन्न हिस्सों में महिलाओं की लामबंदी और प्रतिरोध के उदाहरणों के बारे में पढ़ेंगे।

महिला कामगारों द्वारा लामबंदी और संगठन की अपनी समझ का आंकलन करने के लिए निम्न गतिविधि को कीजिए।

गतिविधि

इंटरनेशनल डोमेस्टिक वर्कर्स नेटवर्क, ई-न्यूज़लेटर नं. 9 और 10 में सुजाता गोथोस्कर का पेपर "डोमेस्टिक वर्कर्स ऑर्गनाइजिंग" को गूगल में खोजकर पढ़ें।

इकाई में चर्चा की गई सैद्धांतिक धारणाओं के प्रकाश में इस लेख की समालोचना करें।

अब हम संगठित करने, लामबंदी करने और अपनी कार्यदशाओं में बदलाव लाने के लिए प्रतिरोध तैयार करने संबंधी महिलाओं के अनुभवों के बारे में पढ़ेंगे।

4.6 महिलाओं के अनुभव : लामबंदी एवं प्रतिरोध

अगर नारीवाद को, महिलाओं के एक द्वितीयक लैंगिक व्यक्तित्व के रूप में असमानताएं सहने और इन लिंग आधारित पदक्रमों को खत्म करने के लिए प्रतिबद्धता के रूप में पहचाना जाए तो वेतन समानताओं के लिए महिला मजदूर संघों के संघर्ष और काम तथा घर के दोहरे बोझ को कम करने के लिए व्यवस्थाओं के निर्माण की कोशिशों को 20वीं सदी के नारीवाद के केन्द्र में रखा जाएगा जो समान अधिकारों हेतु संशोधन के लिए लड़ता रहा। (मैक्क्लीन, 2011, पृष्ठ 181)।

निम्नलिखित मामलों के अध्ययनों से पता चलेगा कि कैसे महिला समूह खुद को संगठित करके न केवल अपने लिए स्थितियों को बदल सकती हैं, बल्कि अपने पेशों में बाद में आने वाली पीढ़ियों के लिए बेहतर श्रमिक अधिकारों के लिए मार्ग भी प्रशस्त कर सकती हैं।

सेवा (एसईडब्ल्यूए) - ग्रामीण भारत में महिलाओं की केस स्टडी

(**स्रोतः** एवरेट्ट और चैल्टन, 2014)

सूक्ष्म-वित्त कार्यक्रम, जो गरीबों को छोटे ऋण और बचत सेवाएं प्रदान करता है, 1970 के दशक में प्रारंभ हुआ जब भारत में स्वनियोजित महिलाओं के संघ (सेवा), कामकाजी महिलाओं के मंच और बांग्लादेश में ग्रामीण बैंक और बंगलादेश ग्रामीण उन्नति समिति (बीआरएसी) ने अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में मुख्य रूप से महिलाओं को लघु ऋण देने की शुरुआत की।

सेवा संस्था गरीब महिला श्रमिकों को उनके निष्पक्ष हितों के आधार पर संगठित करती है। गरीब महिलाओं तक सहकारी (लोकतंत्रात्मक) सिद्धांतों के प्रसार पर जोर देने तथा महिलाओं के राजनीतिक और कानूनी साक्षरता पर केन्द्रित रहने के प्रयास करने तथा महिलाओं के नाजुक और सामूहिक चेतना हेतु शिक्षा देने और सामूहिक संघर्ष हेतु रणनीतियों का विकास करने जैसे कार्य सेवा (एसईडब्ल्यूए) को एक नारीवादी लोकतांत्रिक और रूपांतरणकारी आंदोलन बनाते हैं। (मोहंती, 2011, पृष्ठ 176)।

सेवा संस्था के सदस्य अस्सी से अधिक व्यावसायिक समूहों से आती हैं, जिनके कामों को तीन कोटियों में बांटा जा सकता हैः 61 प्रतिशत कृषि या भवन निर्माण में काम करने वाली दिहाड़ी अनियकालिक मजदूर हैं, 28 प्रतिशत अपना काम करने वाली कामगार हैं (पटरियों पर रेहड़ी लगाने वाली, ग्रामीण छिटपुट उत्पादन करने वाली, कूड़ा बीनने वाली आदि) हैं, और 10 प्रतिशत उद्योगों में काम करने वाली बाह्य श्रमिकों में (रेडिमेड वस्त्रों के उद्योग में, बीड़ी उद्योग आदि में लगीं) से आते हैं। सेवा के सदस्य गरीब हैं, यद्यपि वे सबसे अधिक निराश्रित और दीन हीन नहीं हैं। सेवा ने अपने सदस्यों को सामूहिक शक्ति के द्वारा संपति अर्जन के योग्य बनाकर, खतरों के विरुद्ध स्वयं का संरक्षण करने और शक्ति अर्जित करने के योग्य बनाकर उनके जीवन में बड़ा बदलाव लाया है। 2007-2008 में किए गए एक अध्ययन में पाया गया है कि जो महिलाएँ सेवा संस्था की सदस्य नहीं हैं उनकी तुलना में सेवा के सदस्यों के पास अपना बचत खाता और स्वास्थ्य बीमा था, उनके पास कम ब्याज दरों पर ऋण सुविधा तक पहुंच थी और वे अधिक आत्मविश्वास का प्रदर्शन करती हैं।

सेवा, अपने सदस्यों के लिए विकास सेवाओं के साथ स्थानीय, राज्य, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पक्षपोषण के प्रयासों को मिश्रित करता है। इसने अनियतकालिक दिहाड़ी मजदूरों के तमाम समूहों के लिए एक न्यूनतम मजदूरी के मुद्दे को आगे बढ़ाया है, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय में सफलतापूर्वक याचिका दायर कर पुलिस और स्थानीय सरकार से पटरी और रेहड़ीवालों के उत्पीड़न को रोका है, औद्योगिक बाह्य कामगारों की स्थिति में सुधार हेतु सरकारी अधिकारियों के साथ बातचीत कर सफलता पाई है और भवन निर्माण मजदूरों के लिए एक पेंशन योजना हेतु राज्य सरकार में सफलतापूर्वक जोरदार पैरवी की है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, 1996 में गृह-आधारित कार्य के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय संधि ा निर्मित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन से सफलतापूर्वक पैरवी करने में सेवा संस्था की केन्द्रीय भूमिका थी। आज सेवा, व्यावसायिक सेवाओं की एक विस्तृत श्रृंखला प्रस्तुत करती है। सूक्ष्म-वित्तीयन से शुरुआत करते हुए सेवा ने 1975 में अपना खुद का बैंक बनाया और बचत को बढ़ावा दिया। इसने अपने सदस्यों के लिए बीमारी, मातृत्व, संपत्ति के नुकसान, मृत्यु जैसी आकस्मिकताओं को सम्मिलित करते हुए बीमा उत्पादों का एक एकीकृत पैकेज विकसित किया है। इसने ग्रामीण कढ़ाई कारों के लिए सहकारिताओं को संगठित किया और एक डिजायन तथा विपणन कार्यक्रम विकसित किया है। सेवा बच्चों की देखभाल और वयस्क साक्षरता हेतु कक्षाओं जैसी सामाजिक सेवाएं भी प्रदान करती है।

सेवा की गतिविधियों का प्रधान केंद्र-बिंदु अपने सदस्यों को संगठित करना और उनकी क्षमता निर्माण है। यह संगठन अपने सदस्यों की भर्ती स्थानीय प्राथमिक समूहों (व्यवसाय और स्थानीयता के आधार पर) में करती है, जो सदस्यों की आवश्यकताओं की पहचान करने और उनके समाधान हेतु रणनीतियों के निर्धारण हेतु नियमित तौर पर मिलती हैं, बैठकें करती हैं। इन समूहों से ही जमीनी स्तर के नेता उभरते हैं; वे प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं और संगठन में ही परा-पेशेवर बन जाते हैं और / या सेवा की शासकीय निकायों के प्रतिनिधि के रूप में चुन लिए जाते हैं। सेवा में आमतौर पर हर दो सौ सदस्यों के लिए एक निर्वाचित प्रतिनिधि होता है और संगठन के नेतृत्व में यथेष्ट विविधता रखी जाती है। उदाहरण के लिए, 2006 में सेवा की अध्यक्ष एक खेतिहर मजदूर थी और महासचित भी सेवा की सदस्य थी, जो एक तंबाकू श्रमिक की स्नातक-शिक्षित बेटी थी।

सेवा, महिला श्रमिकों का एक मजदूर संघ है, इसलिए महिलाओं का नेतृत्व हमेशा केंद्रीय रहा है। अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में गरीब श्रमिकों का एक मजदूर संघ कारखानों या कृषि व्यवसाय में होने वाले मजदूर संघों से बहुत अलग दिखता है। अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में काम करने वाले पुरुषों और महिलाओं ने विभिन्न प्रकार के स्थानीय सहकारी संगठनों और मुद्दे आधारित संघों की स्थापना की है। सेवा अपने सदस्यों की जरूरतों को पूरा करने के लिए इनमें से कई संगठनात्मक रूपों को शामिल करता है।

सेवा स्वयं को एक सामाजिक आंदोलन और एक विकास संगठन के रूप में देखता है, जो गरीब कामकाजी महिलाओं के हितों को बढ़ावा देने के लिए संघर्ष करता है और अपने सदस्यों के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए सेवाएं प्रदान करता है। इस तरह से सेवा मजदूर आंदोलन और महिला आंदोलन के लक्ष्यों को एक साथ मिलाकर अपने लक्ष्य रखता है। इला भट्ट ने कहा है कि स्व-नियोजित महिलाओं को शामिल किए बिना, मजदूर आंदोलन "इस नाम के श्रेय लायक आंदोलन नहीं है"; और काम "रणनीतिक रूप से उन मुद्दों के अनुसार महिलाओं के बड़े सदस्यों को संगठित करने का प्रभावी तरीका है जो उनके लिए प्रासंगिक हैं।"

बॉक्स सं. 4.2

तृणमूल स्तर की लामबंदियां : जितनी सतह पर दिखती हैं उससे अधिक है भारतीय महिलाओं का आंदोलन।

जो यह महसूस करते हैं कि भारत में महिलाओं का आंदोलन अपनी पतन की अवस्था में है, उन सभी के लिए यह जानना जरूरी है कि इसका शायद अधिक सटीक आंकलन यह है कि यह अधिक तितर-बितर है, इसकी जड़ें अधिक गहरी हैं और अब यह शहरी और मध्यम वर्ग से आगे बढ़कर अधिक आंतरिक इलाकों और प्रायः और अधिक ग्रामीण इलाकों में स्थानांतरित हो गया है।

अगर 1980 और 1990 के दशकों को चेतना के उत्थान का समय थे तो 2000 का दशक समाज में अधिक अच्छे से न केवल कानूनों में बल्कि जमीनी स्तर पर बदलाव लाने के लिए सक्रिय रूप से काम करने का हो सकता है।

आंदोलन अब अधिक पुराना, अधिक परिपक्व है और वातावरण बदल चुका है। आज हम एक वैश्वीकृत और अधिक संयोजित भारत में रह रहे हैं और विरोध और लामबंदी को लेकर, सौदेबाजी और हस्तक्षेप या बिचौलिए के स्वरूप को लेकर भी इस बात को ध्यान में रखना होगा।

हमारे भारत जैसे विविधतापूर्ण और विशाल देश में कोई एक महिला आंदोलन नहीं हो सकता। देश के तमाम हिस्सों में तमाम प्रकार के आंदोलन हैं और महिलाएँ उन महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाएंगी जो उनके क्षेत्र के लिए और उनके लिए प्रासंगिक होंगे। पूर्वोत्तर भारत में महिलाओं ने वहां के संघर्ष की प्रकृति, सशस्त्र बलों की उपस्थिति और दीर्घावधि के उग्रवाद को देखते हुए राजनीतिक सौदेबाजियों में सीधे तौर पर हस्तक्षेप किया है। इसकी तुलना उदाहरणार्थ उस काम से कत्तई नहीं की जा सकती जैसा काम निरंतर (दिल्ली), उत्तर प्रदेश के नानाविध जिलों में ग्रामीण महिलाओं के साथ कर रहा है, जैसे कि उन्हें स्वयं का अखबार, खबर लहरिया प्रकाशित करने में सहायता कर रहा है या फिर मदुरई में शहरी गरीब महिलाओं को लेकर जो काम पेन्नुरिमई इयक्कम उनके आश्रय और आवास हेतु करती है। परन्तु ये सभी अंततः महिलाओं के सशक्तीकरण को अपने चरम लक्ष्य के रूप में रखे हुए हैं इसके लिए वे चाहे जिस भी रास्ते चल रहे हों।

स्रोतः http://feministsindia.com/tag/ritu-menon

आगामी पृष्ठों में घरेलू महिला कामगारों पर दो केस स्टडीज के बारे में चर्चा करेंगे, एक ब्राज़ील में और दूसरा बंगलौर में। आप पहले मामले में पढ़ेंगे कि कैसे उत्पीड़िता घरेलू कामगारों के समूह से नेतृत्व और प्रतिरोध का उद्भव हुआ और दूसरे मामले में पढ़ेंगे कि लामबंदी और संगठन गैर राज्य संस्थाओं द्वारा लाया गया।

घरेलू कामगारों पर मामलों के अध्ययन (केस स्टडीज)

घरेलू कामगारों को तमाम समूहों द्वारा विभिन्न संदर्भों में संगठित करने के अलग-अलग प्रयास किए जाते रहे हैं और यहां तक कि अपेक्षाकृत कुछ समान रूप से इसमें आंदोलन, संघ, छोटी सभाएं और समितियां रही हैं। इन्हें संगठित करने के तरीकों में विविधता के कारणों में से एक यह है कि इस क्षेत्र के भीतर अत्यधिक विविधता विद्यमान है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ नियोक्ता-कर्मचारी संबंध बहुत गतिशील, लचीले और मनमाने हैं। घरेलू श्रमिकों को अपना अधिकतर समय घर के 'निजी' क्षेत्र में बिताना पड़ता है जिससे उन तक पहुंच बनाने में मुश्किल होती है; और कुछ संदर्भों में नियोक्ता और श्रमिक के बीच समझौते

का गैर-मौद्रिक पहलुओं का विशेष महत्व हो सकता है। इन्हें संगठित करने की तमाम चुनौतियों में से ये कुछ प्रमुख चुनौतियां हैं। अब हम दो मामलों का अध्ययन करते हुए चर्चा करेंगे कि यथार्थपरक परिणामों के लिए घरेलू कामगारों को कैसे संगठित और लामबंद किया गया।

इन दोनों केस स्टडीज़ को "ऑर्गनाइज़िंग वीमेन वर्कर्स इन द इनफॉर्मल इकॉनमी : बियॉन्ड द वेपन्स ऑफ़ द वीक'' (4.9 के अंतर्गत संदर्भ देखें) से लिया गया है।

केस स्टडी 1

ब्राजील में घरेलू कामगारों द्वारा अंतर्राष्ट्रीय प्रतिरोध और लामबंदी

दासता की विरासत द्वारा आकार ग्रहण किए हुए और लिंग, नस्ल तथा वर्ग शोषण के विशिष्ट स्वरूपों से संबंधित घरेलू कामगारों का अपने अधिकारों और पहचान के लिए संघर्ष बहुत पेंचीदा और कठिन है।

ब्राज़ील के घरेलू कामगार, देश की कुल महिला श्रमिकों की 17 प्रतिशत हिस्सा निर्मित करती हैं; इनमें से 93 प्रतिशत महिलाएँ हैं और अधिकांश अश्वेत हैं। कामगारों की 7.23 मिलियन संख्या के साथ वे देश की सबसे बड़ी व्यावसायिक श्रेणी हैं, और सबसे कम वेतन पाने वाले, हाशिए पर छोड़ दिए गए और बेतरह उत्पीड़ित हैं।

अधिकांश, मासिक वेतन के लिए सप्ताह में 44 घंटे से अधिक काम करने के लिए तैयार रहती हैं। कुछ नगर निगम क्षेत्रों में सभी घरेलू कामगारों का पांचवा हिस्सा 'दैनिक' सफाईकर्मी हैं, जिनकी संख्या बढ़ती जा रही है और जो संकटपूर्ण रोजगार सुरक्षा का सामना करते हैं और बीमारी या मातृत्व वेतन जैसे श्रमिक अधिकारों तक उनकी कतई पहुंच नहीं है।

ब्राजील में घरेलू कामगारों के अधिकारों की तलाश 1920 के दशक में शुरू हुई। अश्वेत महिलाओं ने दूसरे कामों में मिलने वाले अधिकारों और कर्तव्यों की तरह सवेतन घरेलू काम की स्थिति और पहचान के लिए संघर्ष करती हुई स्वयं को ब्राजीलियन ब्लैक फ्रंट में संगठित किया। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप 1936 में कैम्पिनास में पहली घरेलू कामगार संघ का निर्माण हुआ।

घरेलू कर्मचारियों के आंदोलन के कार्यकर्ताओं के लिए, इन सहयोगियों ने महिलाओं के आंदोलन और अश्वेत आंदोलन को एक साथ जोड़ने का अवसर तैयार किया जो बदले में उससे प्रभावित भी हुईं और अधिकारों के लिए उनके संघर्ष को समर्थन भी प्रदान किया। परिणामस्वरूप वह सामने आया जिसे 'नागरिक का संविधान' कहा गया जो उस समय सबसे लम्बा और उस समय (1988 में) का दुनिया में सबसे प्रगतिशील संविधान था। इस संविधान में उन अधिकारों को अंकित किया गया था, जिनके लिए घरेलू कामगार संघर्ष करते रहे हैं।

हाल के वर्षों में, सरकार ने घरेलू कामगारों के नागरिकता कार्यक्रम को लागू करने के लिए एफईएनएटी आरएडी (फेनट्राड) के साथ काम किया है। घरेलू कामगारों द्वारा प्रस्तावित और घरेलू काम को पेशेवर बनाने और घरेलू कामगारों के अधिकारों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के उद्देश्य से कार्यक्रम को एक नीति में रूपांतरित कर दिया गया है।

परिवर्तन को संयोजित करना :

ब्राजील में घरेलू कामगारों की सक्रियता को एक लम्बी छलांग या प्रक्षेपण के रूप में रेखांकित किया जा सकता है क्योंकि घरेलू कामगारों के नेतृत्व द्वारा विकसित पहली

गतिविधियां श्रमिक अधिकारों और सामाजिक कल्याण के इर्द गिर्द कामगारों को लामबंद करने तक केन्द्रित थीं। घरेलू कामगार आस पड़ोस, स्कूलों और चर्च में इकट्ठे होने लगे। ये बैठकें दरअसल प्रत्येक कस्बे और अलग-अलग राज्यों में संगठनों के निर्माण की रणनीति थीं। इन समूहों को विस्तृत किया गया और और संघर्षों को समेकित किया गया।

घरेलू कामगारों के अधिकारों के आंदोलन द्वारा संघों के निर्माण ने आंदोलन को एक स्थान प्राप्त करने में सक्षम बनाया, हालाँकि, केंद्रीय कामगार संघ के भीतर निरंतर हाशिए पर रहा।

इसके दो विशिष्ट पहलू यहाँ उल्लेख करने योग्य हैं।

- पहला है एक खास वर्ग के संघर्ष को अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए व्यापक संघर्ष के दायरे में स्थापित करने की ताकत। घरेलू कामगारों का संघर्ष अश्वेत, कामकाजी महिलाओं के संघर्ष का प्रतिनिधि बन गया और ब्राजील में विषमता और भेदभाव के खात्मे की तलाश वाले अन्य आंदोलनों से एकजुट होकर उनके साथ गठबंधन कर लिया।
- दूसरे ऐसे अवसर हैं जो विभिन्न आंदोलनों के एक दूसरे की एकजुटता और संबंध से आ सकते हैं। राजनीतिक क्षेत्रों में हुए गठबंधनों के माध्यम से जो दूसरे सामाजिक आंदोलनों को साथ लेकर आए थे, ये घरेलू कामगार मध्यवर्गीय नारीवादियों से परिचित हो गए जो प्रस्ताव लिखने, वित्तीयन के स्रोतों, समर्थन के ठिकानों के बारे में जानते थे और अश्वेत आंदोलन कार्यकर्ताओं के साथ जो ऐसे राजनीतिक सहारे के स्रोत थे।

यहां यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि बाहरी संगठनों ने इसमें भूमिका निभाई परन्तु घरेलू कामगारों ने स्वयं इस संघर्ष का नेतृत्व किया। अत्यधिक हाशिए की स्थिति से संचालन करते हुए घरेलू कामगारों ने यह समझ लिया कि उन्हें अपने संघर्ष में शक्तिशाली पदों पर बैठे लोगों को शामिल करने की आवश्यकता है, और खुद को सदैव उनकी नज़र में बनाए रखा। पुरुषों के वर्चस्व वाले संघ आंदोलन के भीतर उन्हें जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ा और साथ ही मज़दूरों की ऐसी श्रेणियों के चलते भी जो खुद घरेलू कामगारों को अपने यहां रोज़गार देते थे, और यदि घरेलू कामगार ज़्यादा से ज़्यादा अधिकार हासिल करते, तो उससे वे भी प्रभावित होते ऐसी स्थितियों को भी गहराई से समझने की जरूरत है।

केस स्टडी 2

बंगलौर में घरेलू कामगारों की लामबंदी

काम के सर्वाधिक असंगठित और अदृश्य श्रेणियों में से एक घरेलू काम है। काम के व्यक्तिगत, अंतरंग और निरंतर प्रकृति के कारण सवेतन घरेलू काम में, कामगारों तथा नियोक्ताओं और कार्यस्थल के बीच एक अद्वितीय संबंध शामिल रहता है। भारत में घरेलू कामगार अर्थव्यवस्था की अदृश्य रीढ़ बनाते हैं, और पिछले दो दशकों में भारत में इनकी संख्या में तेजी से इजाफा हुआ है। यह वृद्धि अर्थव्यवस्था का कृषि आधार से सेवाओं और विनिर्माण आधारित अर्थव्यवस्था में बदल जाने से जुड़ी है। शहरी क्षेत्रों में अधिक से अधिक अप्रवास के साथ घरेलू श्रमिकों की आमद बढ़ती जा रही है। उन्हें आमतौर पर 'नौकर' या 'नौकरानी' के रूप में उल्लिखित किया जाता है, यह ऐसा शब्द है जो 'कामगार' या 'श्रमिक' की बजाय बंधुआ और दासता से अधिक संबंधित है।

1970 के दशक के महिलाओं के आंदोलन से प्रेरित होकर, स्त्री जागृति समिति ने कर्नाटक घरेलू कामगार संघ (केडीडब्ल्यूयू) का आरम्भ एवं गठन किया। तब से, यह संगठन बंगलौर

की झुग्गियों में महिलाओं को लामबंदी करती आ रही है, उनके अधिकारों के बारे में उनकी जागरूकता बढ़ाती है और घरेलू हिंसा सहित विभिन्न मुद्दों के इर्द गिर्द उन्हें संगठित करने का काम कर रही है। केडीडब्ल्यूयू 2004 में महिलाओं के समूह के साथ प्रयासों को केंद्रित करने के लिए स्थापित किया गया था। संघ का लक्ष्य था घरेलू कामगारों के बुनियादी अधिकारों को हासिल करना; घरेलू कामगारों के बारे में व्यापक रूप से प्रसारित धारणा 'नौकर' की बजाय 'श्रमिक' में बदलना; और यह सुनिश्चित करना कि नियोक्ता और सरकार उन्हें सामाजिक सुरक्षा के लिए पात्रता वाले श्रमिकों के रूप में मान्यता प्रदान करें।

यद्यपि पुरुष भी घरेलू सेवाएँ प्रदान कर रहे थे, लेकिन घरों में काम करने वाली महिलाएँ उनसे कहीं अधिक थीं। इसके अतिरिक्त घरेलू काम को लेकर एक तयशुदा लैंगिक स्वरूप है, जिसमें पुरुष रसोइया/माली/सुरक्षा गार्ड का काम करते हैं, मगर शायद ही कभी फर्श, कपड़े धोने और बच्चों की देखभाल के कामों में शामिल होते हैं। यह पाया गया कि शुरुआत में महिलाएँ संघ में शामिल होने के लिए बहुत उत्साहित थीं, और उन्हें अपने पहचान पत्र पर गर्व था, लेकिन उनकी भागीदारी को बनाए रखना या उन्हें वेतन और काम की शर्तों जैसे मुद्दों के साथ सक्रिय रूप से संलग्न करना मुश्किल था। कामगारों के लिए जरूरत थी कि वे पहले से सीखी हुई बहुत सी बातों को भूल जाएं और इसमें समय लगना था। उदाहरण के लिए, वे नियोक्ता और घरेलू नौकरों के बीच एक संबंध की आदी थीं जो काफी लचीला होता था। इस तरह के लचीले संबंध में दोनों पक्ष लाभ की स्थिति में थे जैसे कि महिला कामगारों को अपने घरों में अनपेक्षित रूप से अधिक समय देने के बारे में वे इस संबंधों के द्वारा निबट लेती थीं; या फिर आवश्यकता के समय वे ऋण के लिए या वेतन के स्थान पर अग्रिम भुगतान के बारे में कह सकती थीं।

घरेलू कामगारों की भी कई अलग-अलग श्रेणियां थीं जैसे कि पूर्णकालिक या आवासीय श्रमिक जो अपने नियोक्ता के साथ नियोक्ता के परिसर में रहते थे, पूरे दिन के कामगार जो रात में घर जाते थे, अंशकालिक कामगार जो एक साथ कई घरों में काम करते थे। इसलिए इन सभी को लामबंद करना बहुत कठिन काम था।

संगठन नियमित रूप से घरेलू कामगारों से उत्पीड़न और उनकी शिकायतों के बारे में सुनता रहता था लेकिन कोई ऐसा कानून या निवारण तंत्र नहीं था जिससे कि घरेलू कामगारों को सुरक्षा प्रदान किया जा सके और इसी बात ने एक छतरी समिति का विचार दिया जो घरेलू कामगारों के अधिकारों के सवालों को लक्षित कर सके। तमाम गैर सरकारी संगठनों ने साथ आकर केडीडब्ल्ययू का गठन किया। केडीडब्ल्यूयू का मुख्य ध्यान समूहों के निर्माण पर केन्द्रित था। उनकी आवाजों पर सुनवाई हो सके इसके लिए सदस्यता शक्ति को बढ़ाते रहना आवश्यक था। केडीडब्ल्यूयू में भर्ती होने के लिए महिलाओं से स्वयं अपेक्षा थी कि वे इसके बारे में प्रचार प्रसार करें।

संघ में शामिल होने पर प्रत्येक व्यक्ति को फोटो और पते के साथ एक पहचान पत्र जारी किया जाता था और कामगारों, उनके कार्यस्थल और अन्य विवरणों पर आंकड़ा रखा जाता था। कार्ड का मूल्य यही था कि इससे पता चलता था कि अमुक व्यक्ति मजदूर संघ का सदस्य था और इसके व्यावहारिक उपयोगों जैसे कि महिला कामगार इसका प्रयोग करते हुए किसी स्थान, नियोक्ता और स्थानीय राजनीतिक रूप से प्रभावशाली व्यक्तियों का सामना कर लेती थी जैसे कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के मालिकों के समक्ष इस पहचान पत्र से उनमें अधिक आत्मविश्वास आ जाता था, क्योंकि वह कोई कार्ड दिखाने में सक्षम थी और उनकी एक पहचान थी और आवश्यकता पड़ने पर केडीडब्ल्यूयू कार्यालय पदाधिकारियों को बुला सकती थी।

'संघ बनाने के' विचार ने एक स्तर पर बहुत अच्छे से काम किया क्योंकि यह उन महिलाओं के लिए एक कामगार के रूप में पहचान दिलाना शुरू कर दिया था, परन्तु यह भी पाया गया कि उनकी सदस्यता को बनाए रखने के लिए केवल यही काफी नहीं था। बल्कि बढ़ते हुए रूप में ऐसी भावना थी कि संघ बनाना और अधिकारों के लिए लड़ना ही किसी संघ की एकमात्र गतिविधि नहीं हो सकती। सदस्यों को आर्थिक लाभों का वितरण करना संभव नहीं था परन्तु कौशल प्रशिक्षण, स्थायित्व, काम की नियमावलियां और संविदा आधारित भर्ती जैसी सेवाओं की आवश्यकता थी। इन बातों ने केडीडब्ल्यूयू को एक भर्ती प्रकोष्ठ शुरू करने के लिए प्रेरित किया जिसे स्वयं सदस्यों द्वारा ही संचालित किया जाना था। भर्ती प्रकोष्ठ की स्थापना दरअसल एक रणनीति थी, जिससे महिलाएँ सौदेबाजी, घरेलू कामगारों के लिए नई प्रक्रियाओं और मानदंडों तथा परिस्थितियों के विचारों से रूबरू हो सकें।

केडीडब्ल्यूयू को अक्सर कामगारों द्वारा सामना किए गए प्रत्यक्ष स्वरूप के उत्पीड़न से निबटना पड़ता था। संघ के ध्यान में लाया गया सबसे आम मुद्दा चोरियों का था। केडीडब्ल्यूयू की उपस्थिति ने उन सौदेबाजियों में बदलाव पैदा किया जिसमें कामगार शामिल थे। यदि मजदूरी लंबित रहती थी सदस्य जाते थे और वेतन पर सौदेबाजी करते थे या कभी-कभार पुलिस के पास शिकायत दर्ज कराते थे।

जब यौन उत्पीड़न के मामले होते थे तो अगर महिला इसे आगे ले जाना चाहती थी तो मामले को पुलिस स्टेशन ले जाया जाता था। महिलाएँ परामर्श और सहायता देने वाली संस्थाओं के संपर्क में रहती थीं। नियोक्ताओं द्वारा सामान्य तौर पर जारी प्रथाओं को बदलने के लिए सफलता के साथ कुछ कार्रवाई भी की गई। इससे घरेलू कामगारों को दीपावली त्योहार के समय बोनस मिलना शुरू हो गया।

घरेलू कामगारों के पति हालाँकि संघ में होने से उनको होने वाले लाभों को देख सकते थे और जब उन्होंने अपनी पत्नियों को अच्छा और ज्यादा वेतन पाते हुए देखा, मगर जब महिलाएँ कुछ बड़े मुद्दों जैसे सार्वजनिक वितरण प्रणाली के संघर्ष में उतरतीं, जहां अधिकारियों के साथ संघर्ष हो सकता था और दंडित किए जाने का जोखिम था, वहां वे अपनी पत्नियों का समर्थन करने से पीछे हट जाते या हिचकने लगते थे।

सबसे बड़ी स्थूल चुनौती तो वह सवाल बना रहा कि राज्य और राष्ट्रीय दोनों ही स्तर पर घरेलू काम को कानूनी और नीतिगत मान्यता मिले। केडीडब्ल्यूयू को यह बात स्पष्ट हो गई कि सरकार के स्तर पर प्रभावित् करने के लिए एक बहुत बड़ी ताकत की आवश्यकता थी, एक बड़ी भौगोलिक प्रसार की आवश्यकता थी और एक प्रभावी आवाज बनने के लिए बहुत बड़ी संख्या की आवश्यकता थी। इसलिए, सकारात्मक सामुदायिक कार्रवाई पर अपनी ऊर्जा केंद्रित करने का निर्णय लिया गया।

4.7 समकालीन दौर में लामबंदी

वैश्वीकरण के बाद की अवधि में भी लामबंदी और सामूहिक प्रतिरोध करने की रणनीति जारी रही। परन्तु हम रणनीति के स्वरूप में एक बदलाव देखते हैं जैसे कि महिलाएँ सीधे तौर पर उन राज्य एजेंसियों से भिड़ने के लिए तैयार हैं जो उनके उत्पीड़न को दीर्घजीवी बनाते हैं जैसा कि पोस्को और वेदांता के मामले में हुआ कि विकासात्मक गतिविधियों के नाम पर महिलाओं के लिए स्थायी आजीविका विकल्पों को मिटा रहे थे, आप इसे आगे आने वाले अनुभाग में पढ़ेंगे।

उड़ीसा की आदिवासी महिलाओं द्वारा पोस्को विरोधी प्रतिरोध

दोनों तरह की महिलाएँ– युवा और बुजुर्ग मगर सभी दुर्बल पुलिस की मार के सामने खड़ी रहीं और लाठीचार्ज में घायल हो गईं। उड़ीसा के गांवों की इन महिलाओं ने पुलिस कार्रवाई वापस न लेने पर सामूहिक रूप से निर्वस्त्र होने की धमकी दे डाली। ये महिलाएँ पोस्को प्रतिरोध संग्राम समिति (पीपीएसएस) से संबंधित थीं, जिन्होंने पिछले आठ वर्षों से अधिक समय से पोस्को विरोधी आंदोलन की अगुवाई की थी। यह उपद्रव राज्य सरकार की भूमि अधिग्रहण की उस मुहिम के लिए थी जिसमें गांव के सुपारी की बागवानी को साफ करना शामिल था। अधिकतर ग्रामीण मिर्च पाउडर, टूटी चूड़ियों से लैस थे और राज्य सरकार को बल प्रयोग करने से रोक दिया।

उड़ीसा के गोविन्दपुर गांव के हजारों हजार ग्रामीण जिसमें अधिकांशतया महिलाएँ और बच्चे थे, सरकार समर्थित स्टील के दिग्गज उद्यमी पोस्को द्वारा भूमि अधिग्रहण का विरोध कर रहे थे। जबकि सरकार ने अधिग्रहण को अस्थायी रूप से रोकने का फैसला किया है, ग्रामीणों ने अपनी जमीन के लिए अंतिम दम तक लड़ने की कसम खाई है।

(**स्रोतः** http://southasia.oneworld.net/news/india-women-children-lead-posco-protests#Mg)

छत्तीसगढ़ की महिलाओं द्वारा वेदांता के विरुद्ध उपद्रव

आदिम डोंगरिया कोंध आदिवासियों सहित सैकड़ों प्रदर्शनकारियों ने एल्यूमिना रिफाइनरी की स्थापना के विरोध में प्रदर्शन किया। वेदांता समूह कालाहांडी जिले के लांजीगढ़ में एक रिफाइनरी इकाई स्थापित करना और नियामगिरि पहाड़ी से बॉक्साइट अयस्क का खनन करना चाहता था, जो बहुत समृद्ध जैव-विविधता वाली पहाड़ी है।

नियामगिरी 36 बारहमासी धाराओं और दो नदियों का स्रोत है। इन जल संसाधनों ने कालाहांडी के साथ-साथ पश्चिमी उड़ीसा के दूसरे जिलों में खेती को समृद्ध किया है। प्रस्तावित खनन कार्यों से लाखों लोगों की आजीविका नष्ट हो जाएगी। परियोजना का विरोध करने के लिए बनाए गए एक मंच ग्रीन कालाहांडी ने इस उपद्रव का संचालन किया था। कई पर्यावरणविदों और वैज्ञानिक समुदायों ने नियामगिरी पर प्रस्तावित खनन के दुष्प्रभाव पर चिंता व्यक्त की थी। (http://www.thehindu.com/todays-paper/tp-national/tp-otherstates/primitive-tribal-join-stir-against-vedanta/article1870553.ece)

राज्य सरकार की पुलिस और केंद्रीय अर्धसैनिक बलों की भारी सुरक्षा साए में आयोजित एक सभा में अधेड़ उम्र की एक महिला, **लष्किया सिकता** ने कहा, "हम इतने समय से यहां रह रहे हैं, सरकार अब हमारे डोंगर (जंगल) को कैसे बेच सकती है?" एक अन्य ग्रामीण, रिकोटा भाली ने कहा, जंगल उनके देवता, नियाम राजा का निवास था और अगर जंगल उनसे छीन लिए गए तो उनकी संस्कृति नष्ट हो जाएगी समाप्त हो जाएगी। कुटरुका कुन्झी ने घोषणा की, "हमारे जंगलों पर किसी का कोई अधिकार नहीं है, न ही सरकार और न ही कंपनी का। हम अपने बाणों से उन लोगों को छलनी कर देंगे जो हमें अपना जंगल छोड़ने के लिए मजबूर करेंगे।" (http://businesstoday.intoday.in/story/Orissa-niyamgiri-rejects-vedanta-entry-impact-reasons/1/197972.html)

4.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ जाएंगे कि महिलाओं की लामबंदी और संगठित करने की क्षमता को आर्थिक प्रक्रियाओं द्वारा और श्रम बाजार में उनकी स्पष्ट भागीदारी

द्वारा भी अनुकूलित कर दी गई है। विद्वानों और विचारकों ने उत्पादन के विभिन्न आर्थिक तरीकों में काम के सामाजिक संबंधों पर दो प्रमुख कारणों से चर्चा की है, जो महिला श्रमिकों के सांस्कृतिक बाधाओं और अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में महिला श्रमिकों के संकेंद्रण के रूप में उन्हें निर्बल करने वाले कारक के तौर पर उभर रहा है। लेकिन सेवा (एसईडब्ल्यूए) जैसे आंदोलन भी हैं जिन्होंने बिल्कुल आधारभूत स्तर से नीतिगत स्तर तक स्थिति को बदल दिया है।

4.9 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

चर्चा करें कि महिला कामगार कैसे अपने काम के अधिकारों को बदलने में सहायक बनती हैं। अपने उत्तर के समर्थन में इकाई से उदाहरण उद्धृत करो।

4.10 संदर्भ

Custers, Peters **(2014).** Capital Accumulation and Women's Labour in Asian Economies, New Delhi: Aakar Books.

Everett, Jana and Chalton, Sue (2014). Women Navigating Globlisation Feminist Approach to Development. Maryland: Rowman and Littlefield.

ILO (2004). Organising for Social Justice paper prepared for IL Conference, 92nd session, Geneva: ILO.

Maclean, Nancy (2011). The Hidden History of Affirmative Action: Working Women's Struggle in the 1970s and the Gender of Class in Holmstrom, Nancy, The Socialist Feminist Project A Contemporary Reader in Theory and Politics, New Delhi: Aakar Books.

Mohanty , Chandra Talpade(2011) Women Workers and Capital Scripts: Ideologies of Domination, Common Interest and the Politics of Solidarity in Holmstrom, Nancy, The Socialist Feminist Project A Contemporary Reader in Theory and Politics, New Delhi: Aakar Books.

Kabeer, Naila; Sudarshan, Ratna and Milward, Kirsty (2013) (Eds) Organising Women Workers in the Informal Economy Beyond the weapons of the Weak, London/New York: Zed Books.

http://womhist.alexanderstreet.com/absV8N1.htm last accessed on 15th December, 2014.

http://feministsindia.com/tag/ritu-menon/ last accessed on 15th December, 2014.

http://southasia.oneworld.net/news/india-women-children-lead-posco-protests#.VI6uP9KUdMg last accessed on 15th December, 2014.

http://www.thehindu.com/todays-paper/tp-national/tp-otherstates/primitive-tribals-join-stir-against-vedanta/article1870553.ece last accessed on 15th December, 2014.

http://businesstoday.intoday.in/story/orissa-niyamgiri-rejects-vedanta-entry-impact-reasons/1/197972.html accessed on 15th December, 2014.

4.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Maclean, Nancy (2011) The Hidden History of Affirmative Action: Working Women's Struggle in the 1970s and the Gender of Class in Holmstrom, Nancy, The Socialist Feminist Project A Contemporary Reader in Theory and Politics, New Delhi: Aakar Books.

Kabeer, Naila; Sudarshan, Ratna and Milward, Kirsty (2013) (Eds) Organising Women Workers in the Informal Economy Beyond the weapons of the Weak, London/New York: Zed Books.

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY